

धरती घणी रूपाळी

[महाकवि 'तरुण' री हिन्दी कवितावां री राजस्थानी-अनुवाद]

अनुवादक

डॉ. शक्तिदान कविया

अध्यक्ष

राजस्थानी-विभाग

जोधपुर-विश्वविद्यालय, जोधपुर

थळवट प्रकाशन (विराई), जोधपुर

© डॉ शक्तिदान कविया

सस्वरण 1991

मूल्य चालीस रुपये

प्रकाशक यल्लवट प्रकाशन (विराई), जोधपुर

प्राप्ति स्थान (1) कविया निवास, पोलो II, जोधपुर (राज)

(11) हिन्दी पुस्तक मन्दिर, मेहती गेट के मन्दर, जोधपुर

मुद्रक प्रिंटिंग हाउस, जालोरी गेट के मन्दर, जोधपुर

DHARATI GHANI RUPALI

(Translation of Dr Tarun's Hindi poems in Rajasthan)

By Dr Shakti Dan Kavia

40/-

सम्मतियाँ

डॉ रामेश्वरलाल खण्डेलवाल 'तरुण' हिन्दी के ऊर्जा, तारुण्य और सहजोल्लास के कवि हैं। उनकी कविताओं में छायावादी रहस्यानुभूति और लाक्षणिक अभिव्यजना से लेकर समतामयिक कविता की तेजस्विता के स्वर प्रतिध्वनित हुए हैं। उनकी कुछ चुनी हुई कविताओं का राजस्थानी के सरस हृदय कवि डॉ श्रवितदान कविया ने राजस्थानी में उन कविताओं की सम्पूर्ण गरिमा और अर्थ एव भाव की रक्षा करते हुए सुघड अनुवाद प्रस्तुत करके बड़ा ही उपयोगी कार्य किया है। उनका अनुवाद मूल रचना के सन्निकट और उसके लिए सोने में सुगंध जैसा है।

डॉ आनन्दप्रकाश दीक्षित
पूर्व-आचार्य एव अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग
पूना विश्वविद्यालय



'All great poetry is untranslatable' इस उक्ति को असत्य प्रमाणित करने वाला यह रूपांतर अपने ढंग का अनूठा है। हिन्दी-कविताओं का राजस्थानी में सम्भवत यह पहला सफल प्रयोग है। 'तरुण' की तरुणाई श्री कविया में भी प्रभूत माता में है। मूल पठे बिना मूल-सा लगने वाला यह रूपांतर हृद्य है। श्री खण्डेलवाल की हिन्दी-कविताओं में जो माधुर्य और लावण्य है, उससे समधिक इस रूपांतर में है। हिन्दी कम जानने वाले राजस्थानी के ज्ञाता इसका रसास्वाद सहज रूप में कर सकेंगे। जैसा रस, वैसे भाव और तदनु रूप राजस्थानी शब्द जैसे सहज उद्भूत हुए हैं। श्री कविया राजस्थानी के विद्वान् ही नहीं, भाषा-मर्मज्ञ कवि भी हैं। इस रूपांतर के लिए ये बधाई के पात्र हैं।

डॉ नागरमल सहल
पूर्व-आचार्य एव अध्यक्ष, अग्रेजी विभाग
जोधपुर विश्वविद्यालय

Dr Kavia's rendering of Dr Khandelwal's poetic masterpieces shows that a faithful translation can be good where as manifestly in this case by tradition outlook and cherished values the translator and the poet have similar backgrounds which establishes an equation between them Both are poets and both belong to Rajasthan the colourful lands to whose people Nature in its munificence has given their zest, piety feeling and thoughts Both have imbibed in ample measure that which inspired Rajasthanis in all ages to contribute magnificently to the rich pattern of India's culture and earn the Nation's love respect and gratitude

While endorsing the many competent scholars who have commented upon excellence of Tarunji's contribution I would seek permission to observe that its poetic rendering by Dr Shaktidan Kavia's does justice to the original and that had the poet chosen to compose the original in Rajasthani the product would not have been substantially different from Dr Kavia's effort

**Kailashdan S Ujwal, I A S (Retd)
Ex Chairman
Rajasthani Bhasha Sahitya &
Sanskriti Academy**

(ii) अनुवादक का नाम

(iii) डॉ 'तरुण' की ओल्लखण 13

I अतस उछाह

1 प्रीत	17
2 मनवार	18
3 कितरी मधुर वा रात ही	19
4 चीख मर चुप्पी	20
5 मद भार	21
6 चुपचाप	22
7 विरह मिळण	23
8 म्हनें एकलौ ई गावण दी	24
9 ली, कवि री मन खाल दिलाडें	25
10 दोय चिडिया	26
11 मुक्तक	27
12 हिर्य री माल	27
13 मुक्तक	28

II जू भती जूण

14 मरमीली पीड	29
15 सघपें री पथ	30
16 सोह पुरुष थू रोवें क्यू है ?	31
17 जाग म्हारें जीवण री भाग	32
18 मिनखापण	33
19 पछी ! पिजरें रा तोड वार	34
20 घो, चट्टाण ज्यू मल्लाह	35
21 थें भजे नही देखी जीवण	38
22 जीवण मुक्ति या वधण	39
23 ओखद	40
24 जू भार	41
25 मुक्तक	41
26 नी मजूर	41
27 भादमी री रगत	42

28	साप रैवास-राभाँ	44
29	कळीसाज	45
30	अतस-कथा	46
31	हू भगड भायाँ	48
32	राजनीति री सामर भील	49
33	आग म्हारी निजर	50
34	घोखी हुवाँ	51

III कुदरत री कोरणी

35	प्रकृति जीवन री आघार	52
36	घाराँ री चादणी	54
37	सावण	56
38	टावर रा चित्राम	60
39	दूर काळँ वादळा मे	63

IV माटी री सोरम

40	म्हँ बनवासी होतों	65
41	मुक्ति कानी	67
42	माटी रा घर	69
43	गावेडू गोरी	72
44	कामेतण	73
45	दाय आयागी	75

V विराट-वदण

46	नेण री जोत	76
47	निजर मो पर पही धारी	77
48	जनम-जनम मे म्हँने	78
49	विण काम रा धन-धाम ऐ	79
50	धरम री मगळ जोत जळै	80

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ सख्या	अशुद्ध	शुद्ध
17	फूल ने जो सूळ आखँ	सूळ ने जो फूल आखँ
63	इण धरा जळवायु मे	इण धरा जळवायु मे ती

प्रस्तावना

‘धरती घणी रूपाळी’ एक सरस और प्रेरणदायक काव्य संग्रह है, जिसमें डा शक्तिदान कविमा ने डा रामेश्वरलाल खण्डेलवाल ‘तरुण’ की विविध प्रकार की चुनी हुई कविताओं का राजस्थानी-रूपान्तर प्रस्तुत किया है।

डा रामेश्वरलाल खण्डेलवाल हिन्दी-जगत् के एक जाने माने खण्डप्रतिष्ठ विद्वान् एव साहित्य साधक मनीषी हैं। आपने अनेक उच्च कोटि के शिक्षा-प्रतिष्ठानों में प्राध्यापक के रूप में कार्य करते हुए साहित्य-सेवा का सतत अनुष्ठान किया है और इस प्रकार आपका सम्पूर्ण जीवन वाग्देवी की उपासना में बीता है, जो किसी पुण्यात्मा को ही मुलभ होता है।

डा तरुण को हिन्दी-संसार में एक कवि के रूप में विशेष ख्याति मिली है और ‘नव हिमाचला’ तथा ‘खुनी पुल पर मे गुजरते हुए’ आदि आपके कविता संग्रहों का सुधी पाठकों ने पूरा सम्मान किया है। ‘तरुण’-काव्यग्रंथावली में आपके मौलिक काव्य की समवेत प्रस्तुति है, जो वर्तमान हिन्दी साहित्य के लिए एक गौरवपूर्ण अनमोल रत्न है।

आपकी कविताओं के राजस्थानी-रूपान्तरकार डा शक्तिदान कविमा जोधपुर-विश्वविद्यालय में राजस्थानी विभागाध्यक्ष होने के साथ-साथ एक विद्वान् अनुसंधान कर्ता एव उच्चकोटि के राजस्थानी कवि के रूप में ख्याति-प्राप्त हैं। आपको अनेक ‘सम्मान’ मिले हैं और साहित्य प्रसार हेतु विदेश-भ्रमण का सुभवसर भी प्राप्त हुआ है। आपने विविध प्राचीन ग्रंथों का विद्वत्ता-पूर्ण सम्पादन किया है। आपके द्वारा अनूदित अग्नेज कवि ग्रंथ की प्रसिद्ध काव्य-कृति Elegy (शोकगीत) का राजस्थानी अनुवाद तो बहुत ही अधिक लोकप्रिय हुआ है। ‘धरती घणी रूपाळी’ आपका दूसरा राजस्थानी अनुवाद सामने आया है।

‘धरती घणी रूपाळी’ पाँच खण्डों में विभक्त है। प्रत्येक खण्ड में अनेक कविताएँ हैं। खण्डों के नाम इस प्रकार रखे गये हैं—

- 1 अतस-उद्याह
- 2 जू भूती जूण
- 3 कुदरत री कोरणी
- 4 माटी री सोरम
- 5 विराट-चदण

प्रथम लण्ड 'अतस उद्याह' मे, जैसा कि इसके नामकरण से स्पष्ट है, मानव-मन की विविध तरंगों को लहराया गया है। ये तरंगें बेगवती हैं और सहज ही पाठक के मन को आकर्षित एवं प्रभावित करने में समर्थ हैं। सर्व प्रथम दो गई 'प्रीत' शीर्षक कविता से यह स्वय-सिद्ध है—

डूब नं मभधार मे, कह दं 'हुवां हू पार',
 आधियां मे ऊरुं, जो धार सू बिपरीत ।
 वो करंला प्रीत साची, वो करंला प्रीत ॥
 दाह दीयाळी जिकण रं, हे मरण त्योहार,
 सावढी चंदण कपूर, समान जिणरं सीत ।
 वो करंला प्रीत साची, वो करंला प्रीत ॥

इसी क्रम में 'मद भार कविता का अंश भी अवलोकनीय है—

म्हारं हिवड़े मद-गीता री,
 एकल ही अधिकार होयगी ।
 इतररी मद आयी फूला मे,
 फूलां नं ही भार होयगी ।
 भाव भरीज्या मन में इतरा,
 पलका भारी होण लागी ।
 गळीं व ध्यां, भागळियां रुगो,
 वन्द वीण री तार होयगी ॥

साथ ही 'लो, कवि री मन खोल दिख्ताऊ' कविता की कुछ पंक्तियाँ भी प्रमाण-स्वरूप पठनीय हैं—

अतस-जग री रग विरगी,
 धण निधिया अणमोल वताऊ ।
 लो, कवि री मन खोल दिख्ताऊ ।
 औ देखो आसू री मोती—
 अमित आव जगमगती जोती ।

मीठ गडाम'र देखो इण मे,
 औ भूगोल-खगोल दिखाऊ ।
 औ पूनम री नही गिगन है—
 भाव भरघो औ कवि रों मन है ।
 वह जासी जळ थळ अम्बर लो,
 रस री प्रचळ हिलोळ दिखाऊ ।

पुस्तक के दूसरे खण्ड 'जू भती जूण' मे सर्वाधिक कविताएँ संकलित हैं ।
 जैसा कि इसके शीर्षक से प्रकट होता है, इस विभाग मे दी गई रचनाओं का
 आधार प्रमुखतः मानव जीवन है, जिसमे सुख-दुःख के अनुकूल-प्रतिकूल अनेक
 प्रसंग समुपस्थित हैं । ऐसा सब होने पर भी कवि के मन का उत्साह भाव सर्वत्र
 व्याप्त है और वह सघर्ष-शील जीवन व्यापार का समर्थक है । कुछ उदाहरण
 देखिये —

'सघर्ष री पय'—

जद नाब जळ मे छोड दी,
 तूपान मे ही मोड दी,
 दे दी चुणौती सिधु नै,
 लो पार ज्यू मरुधार है ।
 ससार री पी-पी गरळ,
 जद कर लियो मनडौ सरळ,
 भगवान शकर बण गया,
 लो राख ही सिणगार है ।

इसी क्रम मे 'ओ, चट्टाण ज्यू मल्लाह' कविता का कुछ अंश भी द्रष्टव्य है—

पयाणो कियो ये किण और ।
 छाया वादळा घणघोर,
 छोळा मे भयकर रोर,
 जळ री नही दीस छोेर,
 भूला तिरै है घण ग्राह ।
 ओ, चट्टाण ज्यू मल्लाह ।
 सामो घाघिया सपेख,
 काळी रैण नेणा देख,
 कंडी भँवर है विकराळ,
 नार्च जाण नागो काळ,

प्रो, चट्टाण ज्यू मल्लाह ।

इसडो है विसी उजियास,
जिणसू अडिग घारी घास,
जगमग दीपती वा जोत,
घातम सगत रै उद्योत,

प्राणा मे अमर उच्छाह ।

प्रो, चट्टाण ज्यू मल्लाह ।

यह कविता बौद्ध कालीन भारत की महाजनक मम्बन्धी अमर कथा का सहज ही स्मरण करवा देती है, जिसमें ध्यवहारी महाजनक पोत-भग हो जाने पर भी महासमुद्र में तैरता रहता है और देवी के चमत्कार से पुनः सब प्रकार से सम्पन्न हो जाता है। यह कविता भारतीय भावधारा की प्रखण्डता का एक सुन्दर निदर्शन है।

साथ ही, वर्तमान मानव-समाज में व्याप्त 'राजनीति' विषयक 'राजनीति की सामर भील' का चित्रण भी विशेष रूप से व्यातम्य एवं विचारणीय है—

रेत रं रस्तं गुजरता,
देखता जावा हा म्हे सामर भील, भीला ताई ।
सारी गघ सू नाक भरता ।
अठं कठं पेड पत्ता, पळ फूल, भँवर-गुजार ?
अठं ती वस तीखी कडवी गघ, हवा, सार,

लीला-घौळा-गुलाबी बिगदा बाळं पाधरं पाणी री विस्तार ।
इण मे जो पट्टी कागद, पेड पत्ती, गाभी-लत्ते—
उणरी ती वस एक ई रूप बदळ— लूण, लूण, लूण, काई ।
सारी लूण, कोसा ताई ।

पुस्तक के तृतीय खण्ड 'कुदरत री कोरणी' में बाह्य प्रकृति का चित्रण है। बाह्य प्रकृति अनेक-रूपा है। कहीं वह 'सजला सुफला शस्य-श्यामला' है, तो कहीं पर्वतीय घघवा मरुस्थलीय स्वरूप में विराजमान है। सर्वत्र उसका अपना सौन्दर्य और आकर्षण है। इसी तथ्य को इस विभाग में स्वाभाविक रूप में उकाशमान किया है। आगे 'घोरों री घादणी' कविता का कुछ अंश अहरेण स्वरूप प्रस्तुत है—

। घरती घणी र्पाळी

(1)

दिन भर सू सिळग रयी ही,
तावड री तिड भूमडळ ।
नभ मे कळवळनी किरणा,
यरसाती ही दावानळ ।
आतक हुवै जिण गन सू,
अत्याचारी अघपत री ।
घोरा री इण धरती मे,
आतस री तप इण गन री ॥

(2)

जद हुई साभ तां कुदरत,
वीभरतां रुप विसरियां ।
लू वेस वदळ नं भाई,
धर सीतळ पवन पसरियां ।
मिमभर नीवा री महर्क,
अतस मे भरं उजेळा ।
वायरियां करं वसनी,
वेंवळं टावर जू वेळा ॥

पुस्तक का चतुर्थ खण्ड 'माठी री सोरम' इसके तीसरे खण्ड से कुछ अधिक भिन्न नहीं है, फिर भी इसका अपना रंग है, जो सहज ही हृदय पर छा जाता है। 'म्है वनवासी होती' कविता का सार स्वरूप इस प्रकार प्रकट किया गया है—

कुमुम कौट जू हाय । सम्यता, चरणी कर पोलाळी ।
भनईं जाळों, भूईं ताळों, पडर्धां हसण पर पाळी ।
म्है उजास री अमर पुत्र, रे मुक्ति लोक री प्राणी ।
पानरग्यो आजाद उडाणा, इमट रसीली वाणी ।
जीमण हित बणग्यो सोधन विजईं री सूवटियो ती ।
म्है वनवासी होती ॥

इसी क्रम में 'मुक्ति कानी' कविता का एक अंश भी देखिए—

हाल हिया ! इण निठुर जयत सू, दूर बठ ई थोडी ताळ ।
जठे डार ऊभा हिरणा रा, खुली चौकडी भगता व्हे ।
मितमित करता मीठे जळ रा, निरपळ भरणा भरता व्हे ।

सोनल ऊपा भवल बनी, प्रायमतां सूरज सिद्धी—
 कु जा रै हरियल भांगणिय, घा चुपचाप उतरता छै ।
 चांदहल री किरणा राबै, लहरा पर चित्राम रसाळ ।
 हाल हिया ! इण निठुर जगत सू, दूर कठै ई षोढी ताल ॥

इसके साथ ही ग्राम्य जीवन का चित्रण भी प्रसाधारण रूप में स्वाभाविक तथा प्रेरणादायक है—

जुग-जुग मू शोपित गांवा रा ए नारी नर ।
 अधनगा भूसा अयूक, लैणं मूँ जरजर ।
 ऐ जीवण सारू सांवरिये ऊपर निरभर—
 नीचे ज्यारं धरती, ऊपर मूनी अम्बर ॥

पुस्तक का अंतिम खण्ड 'विराट-वदन' प्रसाधारण रूप से महत्वपूर्ण है । यह एक साथ ही शब्द-मौन्दर्य से अलंकृत और अर्थ गभीर है । इसमें भगवान श्री राम और भगवान श्री कृष्ण की उपासना का माहात्म्य सरल तथा सहज रूप में चित्रित है । 'जनम-जनम मे म्हेनै' कविता का एक अंश इस प्रकार है—

सीत तावडी, सुख दुख रा ऐ जनम-मरण रा दुद रहे,
 थे सँवळा रँवो भव-भव मे, चाहे सब विपरीत मिले ।
 जनम-जनम मे म्हेनै आपरं, चरण-कमळ री प्रीत मिले ॥
 जप-तप जोग असम्भव म्हारं, नीं मुगती री चाह रही,
 पा लेखू सगळी जे धारी, बसी री मगीत मिले ।
 जनम-जनम मे म्हेनै आपरं, चरण कमळ री प्रीत मिले ॥

इस कविता में मध्यकालीन ब्रजभाषा कवि रमलान की अमृत वाणी का स्वर सुनाई देता है, तो साथ ही भारत-कोबिला सरोजिनी नायडू की अंग्रेजी कविता Flute का स्वर भी निनादित हो रहा है, जो देश और काल की सीमाओं से ऊपर मानव-मन की एकता का उद्घोषक है ।

भगवान श्रीराम की वन्दना इस प्रकार की गई है—

विण काम रा धन-धाम ऐ,
 संमान सब आराम रा—
 जे हा सका नी म्हे कदेई,
 इण जनम मे राम रा ।
 श्री राम हदै चरण-कमळा,
 सीस ज भुकियो नही,

तो योभू ढोवण काज म्हें ती,
 बळघ आठू जाम रा ।
 सआट वण पायां किसू,
 जे जीतग्या समार तै,
 जे हो सवया नी राम रा,
 मजदूर म्हे विन दांग रा ।

ऐसा सहज ही अनुभव होता है मानो इस कविता में भक्त प्रवर महाकवि तुलसीदास की दिव्य वाणी गू जायमान है ।

अन्त में 'धरम री मगळ जोत जळें' कविता में सार्वभौमिक मानव-कल्याण की कामना के माध्य प्रकारान्तर से इस काव्य-संकलन का माहात्म्य प्रकाशमान हुआ है—

पुराणा पता सब भड जाय,
 मानवी हरियाळी लहराय,
 मिळें मगळा ही मानव बधु,
 नेह सू लाग आज गळे ।
 धरम री मगळ जोत जळें ॥

'धरती धणी रूपाळी' काव्य संग्रह से ऊपर जो विविध उद्धरण दिये गये हैं, उनको पढ़कर कोई भी पाठक ऐसा अनुभव नहीं करता कि यह राजस्थानी भाषा की मौलिक रचना न होकर वस्तुतः अनुवाद मात्र है । यह सब विद्वान् अनुवादक डा शक्तिदान कविया की विद्वता और बहुविध योग्यता का सुफल है । आपका राजस्थानी भाषा-साहित्य का अध्ययन बडा गम्भीर एवं विस्तृत है । साथ ही आपकी शब्द सम्पदा भी अत्यन्त विशाल है । आपने प्रत्येक राजस्थानी शब्द-रत्न का मोल पूर्णतया परख लिया है । फलतः आपका प्रयोग सहज ही अपने अर्थ-गौरव को प्रकट करने में समर्थ है ।

इसके साथ ही डा कविषा स्वयं राजस्थानी भाषा के अग्रगण्य कवियों में प्रतिष्ठित है । आप पुरातन के साथ ही अधुनातन राजस्थानी काव्य धारा से सुपरिचित ही नहीं, उसके सर्जनाशील विद्वान् भी हैं । अनुवादक का कार्य बडा कठिन माना जाता है, परन्तु जो विद्वान् दोनों भाषाओं का मर्मज्ञ हो, उसके लिए यह काम सहज भी है । डा कविया के लिए हिन्दी और राजस्थानी दोनों भाषाएँ पूर्णतया आत्मीय भाव रखती हैं । इतना ही नहीं इन दोनों भाषाओं के अनिरिक्त भारत की सभी आधुनिक भाष्य भाषाओं को इस प्रदान करने वाली देववाणी संस्कृत का वरदान भी आपको प्राप्त है,

सोनल ऊपा नवल बनी, आधमती सूरज निदूरी—
 कुजा रँ हरियल आगणियँ, आ चुपचाप उतरता व्हे ।
 चादडलँ री विरणा राचँ, लहरा पर चित्राम रसाळ ।
 हाल हिया । इण निठुर जगत सू, दूर कठँ ई थोडी ताळ ॥

इसके साथ ही ग्राम्य जीवन का चित्रण भी प्रसाधारण रूप में स्वाभाविक तथा प्रेरणादायक है—

जुग-जुग मू शोधित गावा रा ऐ नारी-नर ।
 अधनगा भूखा अधूभ, लँण सूँ जरजर ।
 ऐ जीवन मारू सावरियँ ऊपर निरभर—
 नीचे ज्यारँ घरती, ऊपर मूनी अम्वर ॥

पुस्तक का अंतिम खण्ड 'विराट-वदण' प्रसाधारण रूप में महत्वपूर्ण है । यह एक साथ ही शब्द-मान्दर्य से अलंकृत और अर्थ गभीर है । इसमें भगवान श्री राम और भगवान श्री कृष्ण की उपासना का माहात्म्य सरल तथा सहज रूप में चित्रित है । 'जनम-जनम में म्हेनै' कविता का एक अंश इस प्रकार है—

सीत तावडी, सुख-दुख रा ऐ जनम मरण रा दु द रहे,
 ये सँवळा रँवो भव भव में, चाहै सब विपरीत मिळै ।
 जनम-जनम में म्हेनै आपरँ, चरण-कमळ री प्रीत मिळै ॥
 जप-तप जोग असम्भव म्हारँ, नी मुगती री चाह रही,
 पा लेस्यू सगळी जे धारी, बसी री मगीत मिळै ।
 जनम-जनम में म्हेनै आपरँ, चरण-कमळ री प्रीत मिळै ॥

इस कविताश में मध्यकालीन प्रजभाषा-कवि रसखान की अमृत-वाणी का स्वर सुनाई देता है, तो साथ ही भारत-कोकिला सरोजिनी नायडू की अंग्रेजी कविता Flute का स्वर भी निनादित हो रहा है, जो देश और काल की सीमाओं से ऊपर मानव मन की एकता का उद्घोषक है ।

भगवान श्रीराम की वन्दना इस प्रकार की गई है—

किण काम रा धन-धाम ऐ,
 संमान सब आराम रा—
 जे हो मका नी म्हे कदेई,
 इण जनम में राम रा ।
 श्री राम हदै चरण-कमळां,
 सीस जे भुकियौ नही,

तीं बोझ ढोवण काज म्हे तीं,
बळध भाटू जांम रा ।

सम्राट बण पायीं किंमू,
जे जीतग्या समार नै,

जे हो सवषा नी राम रा,
मजदूर म्हे चिन दाम रा ।

ऐसा सहज ही अनुभव होता है मानो इस कविता में भक्त-प्रवर महाकवि तुलसीदास की दिव्य वाणी गुंजायमान है ।

अन्त में 'धरम री मगळ जोत जळें' कविता में सार्वभौमिक मानव-कल्याण की कामना के साथ प्रकारान्तर में इस काव्य-सफलन का साहाय्य प्रकाशमान हुआ है—

पुराणा पत्ता सब भट्ट जाय,
मानवी हरियाळी लहराय,
मिळें मगळा ही मानव बधु,
नेहू सूनू लागे आज गळें ।
धरम री मगळ जोत जळें ॥

'धरती धणी रूपाळी' काव्य संग्रह में ऊपर जो विविध उद्धरण दिये गये हैं, उनको पढ़कर कोई भी पाठक ऐसा अनुभव नहीं करता कि यह राजस्थानी भाषा की मौलिक रचना न होकर वस्तुतः अनुवाद मात्र है । यह सब विद्वान् अनुवादक या शक्तिदान कवियों की विद्वत्ता और बहुविध योग्यता का सुफल है । आपका राजस्थानी भाषा-साहित्य का अध्ययन बड़ा गम्भीर एवं विस्तृत है । साथ ही आपकी शब्द-सम्पदा भी अत्यन्त विशाल है । आपने प्रत्येक राजस्थानी शब्द-रत्न का मोल पूर्यंतया पर्यन्त लिया है । फलतः आपका प्रयोग महत् ही अपने अर्थ-गौरव को प्रकट करने में समर्थ है ।

इनके साथ ही या कविया स्वयं राजस्थानी भाषा के अप्रगण्य कवियों में प्रतिष्ठित हैं । आप पुरातन के साथ ही अधुनातन राजस्थानी काव्य-धारा से पुनरिचिन्तन ही नहीं, उसके सर्जनाशील विद्वान् भी हैं । अनुवादक का कार्य बड़ा कठिन माना जाता है, परन्तु जो विद्वान् दोनों भाषाओं का समर्थ हैं, उनके लिए यह काम सहज भी है । या कवियों के लिए हिन्दी और राजस्थानी दोनों भाषाएँ पूर्णतया साम्य भाव रखनी हैं । इतना ही नहीं इन दोनों भाषाओं के अतिरिक्त भारत की सभी प्राच्य भाषाओं को बराबर प्रशान करने वाली देवबाणी संहिता का बरदान भी आपको प्राप्त है,

जिसका अपनी सभी रचनाओं में आप पूरी छूट के साथ उपयोग करते हैं। यही कारण है कि आपकी भाषा (राजस्थानी) सुन्दर एवं सरस रूप में पूर्णतया साहित्यिक है और अर्थ-गौरव में सुसम्पन्न है। ऐसा ऊपर दिये गये विविध उद्धरणों में सहज ही देखा जा सकता है।

डा कविया की भाषा-शैली में अपना एक विशेष गुण भी परिलक्षित है। पुराने राजस्थानी गद्य-लेखकों की तुलना में गद्य में बड़ी अभिरुचि रही है और ऐसी रचनाओं की संख्या भी कम नहीं है। जिन्होंने डा कविया के गद्य लेखों को पढ़ा है, वे जानते हैं कि आपका तुलनात्मक गद्य के प्रति बड़ा रुझान है। इससे एक प्रकार का नाद सौन्दर्य प्रकट होता है। परन्तु ऐसा करने में कोई समर्थ गद्यकार ही सफल हो सकता है। डा कविया में यह सामर्थ्य विद्यमान है। यही कारण है कि आपके पद्यों का तुलनात्मक स्वरूप इतना सुन्दर और आकर्षक हो गया है।

इतना ही नहीं, पुराने राजस्थानी कवियों का आवश्यक अलंकार 'वैण-सगार्ड' भी अत्यन्त प्रसिद्ध है। यह एक प्रकार का अनुप्रास है। छन्द में प्रत्येक चरण के आद्य और अन्त्य शब्दों के प्रथमाक्षर समान होने से 'वैण सगार्ड' अलंकार बनाता है, जिसके अनेक भेद राजस्थानी छन्दशास्त्र में वर्णित हैं।

'घरती घणी रूपाळी' की कई कविताओं में यह अलंकार अनुवादक के स्वभावानुसार स्वयं ही आ गया है। इस दिशा में ऊपर दो नई 'घोरा री चादणी' कविता के उद्धरण की पिछली चार पक्तियाँ उदाहरण स्वरूप द्रष्टव्य हैं।

यह भी डा कविया की सामर्थ्य का ही एक सबूत है कि आपने डा 'नरण' की सभी कविताओं का राजस्थानी अनुवाद समान छन्दों में प्रस्तुत किया है, जिससे मूल कविता के नाद-सौन्दर्य में कोई कमी नहीं आ पाई है।

आगे पुस्तक के कुछ राजस्थानी काव्यांश दिए जा रहे हैं, जिनकी परस्पर तुलना उनके मौलिक हिन्दी स्वरूप से करने पर एक नया चमत्कार प्रकाश में आता है—

(1)

खेत नवी पानोळ ऊगती, हेत हिये करती हरखे ।
 तीखे कठ उगेरे तेजी, हरियाळी माठा निरखे ।
 पाकला खेती मोनीली, खळा भरीजला भारी ।
 लैणी ऊतरमी हमके ती, हेखी गुणसी गिरधारी ।
 करसे री कामण रे कठा, आज नवी मुर लहरायी ।
 रिमन्निम रिमन्निम वरस रयी जळ, हरघी-भरघी सावण आयी ॥

(घरती घणी रूपाळी, पृ 57, सावण)

देख खेत के नव पीधो को, हर्षित होकर आज किसान,
 बैठ खेत की सजल मेड़ पर, मुक्त कठ से करता गान,
 खेत पकेंगे ग्रहा सुनहले, मर जायेंगे सब खलिहान,
 भव की वार महाजन का ऋण, चुकवा ही देगा भगवान,
 कृपक-वधू के कठो मे भी, आज नया स्वर लहराया,
 रिमझिम रिमझिम बरस रहा जल, हरा-भरा सावन आया ।

(‘तरुण’-काव्यग्रथावली, पृ 185, सावन)

(2)

एक बल डूगर डीगोडा, उठी मौत री खाई ।
 उण पगडाडी बहनौ, घण रै सम दिया गलवाही ।
 भीफर पटा बिखेर, करत हाकल बाणाबलि डाचौ ।
 जबडा भीड लाल आख्या सू, सत्रु चबाती काचौ ।
 जीवन री सगळी रस पीती, धरती समझ कठौती ।
 म्हे बनवासी होती ॥

(धरती धणी रूपाळी, पृ 66)

एक धोर गर्वोभ्रत पवंत, इधर मृत्यु की खाई,
 ऐसी पगडडी चलता, दे प्रिया-बठ गलवाही ।
 भबरे वाल बिखेर, मार चिधाड, खीच प्रत्यचा—
 जबडे दबा, लाल भाँखो से शत्रु चबाता कच्चा,
 जीवन का मारा रस पीता, धरती समझ कठौता ।

भ बनवानी होता ॥

(‘तरुण’-काव्यग्रथावली, पृ 42)

ऊपर दिये गये दोनों उद्धरणों पर ध्यान देने से विदित होता है, कि
 डा ‘तरुण’ के मूल भाषी को पूर्णतया सुरक्षित रखते हुए उन्हें बाहर और
 भीतर में भी सर्वथा राजस्थानी बना दिया है। यह अनुवादक के कौशल,
 प्रतिभा और विद्वत्ता का पुष्ट प्रमाण है।

राजस्थानी भाषा में अनुवाद की परम्परा पुरानी है परन्तु प्रमुखतया यहाँ
 संस्कृत से राजस्थानी रूपान्तर हुए हैं, यद्यपि फारसी से राजस्थानी में अनूदित
 ग्रन्थ भी नमूने के तौर पर विद्यमान हैं। वर्तमान में यह अनुवाद परम्परा तेजी
 से प्रागे बढ़ रही है और संस्कृत ही नहीं, भारत की अन्य प्रान्तीय भाषाओं
 बंगला, गुजराती, मराठी, आदि से भी राजस्थानी भाषा में अनुवाद हो रहे
 हैं। इनके साथ ही विदेशी भाषाओं की रचनाएँ भी राजस्थानी में अनूदित

होकर नामने घा रही हैं । यह परिपाटी साहित्य की समृद्धि और सम्पन्नता के लिए आवश्यक है ।

हृषं का विषय है कि राजस्थानी साहित्यकार इस दिशा में सक्रिय हैं और उनके श्रम तथा प्रतिभा का सुफल जन माधारण को प्राप्त हो रहा है । फिर भी हिन्दी से राजस्थानी में अनुवाद कम ही देखने में आता है । इसका कारण यह भी हो सकता है कि राजस्थान के प्रायः सभी साहित्य प्रेमी हिन्दी साहित्य से परिक्रित हो रहते हैं अथवा वे इन दोनों भाषाओं की स्वतन्त्र सत्ता को स्वीकार नहीं करते । परन्तु प्राचीन राजस्थानी काव्य के साथ उसका हिन्दी अनुवाद देना सभी नितान्त आवश्यक समझते हैं । ऐसी स्थिति में राजस्थानी की हिन्दी से अलग स्वतन्त्र सत्ता तो स्वयंसिद्ध ही है ।

प्रसन्नता की बात है, कि डॉ० शक्तिदान कविया ने राजस्थानी भाषा की पुराने समय से खली घा रही अनुवाद परम्परा को सुन्दर रूप में आगे बढ़ाया है, जिसके लिए वे हार्दिक धन्यवाद के पात्र हैं ।

डॉ० मनोहर शर्मा

अध्यक्ष

हिन्दी विश्व भारती अनुसंधान परिषद्
घोकानेर (राजस्थान)

अनुवादक रा आखर

कविता मानखै रँ अतस री दरदभरी सरस अभिव्यक्ति है । चेतना रँ सिलरा जद भावा री कांठळ वरसण आवै, उण पुळ शोक ती श्लोक अर वेदना छन्द वण जावै । कविता री कडिया अतस रँ मानसरोवर सू नीसरियोडें मोतिया री लालीणी लडिया हूँ । इण देश मे अरद जुगद सू काय री घणी महिमा अर मानता रही । समर्थगुरु रामदास रँ सबदा मे—'आता वन्दू कवीश्वर, शब्द सृष्टि चे ईश्वर ।' सस्कृत री एव उक्ति मुजव तो लाज सू वघती आभूषण काई अर कविता आगे राज काई चीज हूँ,—'ब्रीडा चैत्किम् भूषणं सुकविता यद्यस्तु राज्येन किम्' ।

राजस्थानी मे एक श्रीलाणी कहीजँ—'मिनस जगत मे मोकळा, मिळें न मिनवाचार' । आ ईज गत आजकल कविता री है । कवि ती भात भात रा घणाई मिळें, पण सिरँ अर सातरा ती विरळा इज लावै । म्हारी ती श्री विश्वास है, कँ चोखी अर अनोखी चीजा कम ई मिळें पण वे किणी रँ भेळी ई नी भिळें । जथा—

कुदरत सू चोखी चीजा कम, भाठा जितरा नी हीरा व्हे ।
काटा जितरा नी फूल हुवँ, सूबा जितरा न मतीरा व्हे ।
किस्तूरी मृग रा डार कठें, गज मुक्तावां रा हार कठें ?
गदा नाळा ती सब ठोडा पण गगाजळ री धार कठें ?
इण उडक दुडकियै एवड री, भू विलकुल करे विचार मती ।
सत री पतवार पार होसी, मनडा तू हिम्मत हार मती ॥

असल मे मानषी लाज मरजाद म, नदी किनारा म अर कविता छन्दा मे इज पावै । छन्द चाहे पुस्त-छन्द ह्यो, पण भाष रँ माथे लय री सरसता जरूरी है । मानव धरम अर कवि करम री जाणकारी बिना कविता अघूरी है । लय-हीणी वेतुकी नीरस ओळिया सू ती मन छीजँ, पछें आजकल री 'अकविता' नै कविता कीकर कहीजँ ? असली कविता वा हूँ जकी अतस नै परसँ अर निराशा रँ अघकार मे आशा री दीप दरसँ । पढणहार रँ मन भावँ अर वा सहज ही कठे हुय जावै । घणा जणा उणनँ सीखँ सराहै, ती केई मायडभाषा में अनुवाद करणी चाहे ।

म्हारें जीवन मे दोय कवि ऐहा घाया, जके घणा ईज दाय घाया । एक तो अंग्रेज कवि टॉमस ग्रे अर दूजो हिन्दी कवि डॉ 'तरुण' । सन् 1958 मे म्हें श्री महाराज कुमार कॉलेज जोधपुर मे इण्टर री विद्यार्थी हो, जद हिन्दी अर अंग्रेजी सहित्य म्हारें ऐच्छक विषय हा । कविता रचण री अर पढण री वचपण सून ही रुचि ही, इस कारण डिग्री अर पिगळ रें साथे ही हिन्दी-अंग्रेजी री अनेक घोषी-अनोषी कवितावा आव-भाव मू पढी । वा दिना मे अंग्रेज कवि टॉमस ग्रे री 'एलीजी' (Elegy) अर हिन्दी-कवि डॉ रामेश्वरलाल खण्डेलवाल 'तरुण' री कविता 'बटोही ठडी सांस न ले' म्हने इतरी दाय आई, कं ऐ दोनू कवि म्हारें हिये में वसग्या ।

म्हें घायूनै राजस्थान री घोरा-घरती घळवट री वामी, जठे पग-पग माथे भवखाया मू जूभणी पढें, अर कष्ट जीवन री कसोटी रें रूप मे अंग्रेजणी पढें । जोगेसरा अर कवेसरा री जमी, जठे प्रतिभा री नही फगत साधना री कमी । गरीब मिनखा रें जीराण माथे 'एलीजी' री भाव मढाण है, ती 'बटोही ठडी सांस न ले' मे हीमत री कीमत अर 'तरुण' री तरुणाई री झोळखाण है । इणी कारण म्हें ग्रे री 'एलीजी' री राजस्थानी-पद्यानुवाद वा इज दिना मे कियो, जकी 'प्रेरणा' (मासिक) रें चार अको (जनवरी मू अंग्रेज 1959) मे जोधपुर मे मटीक छपियो । कुल 32 छन्दा री उण अमर कविता री एक नमूनी राजस्थानी अनुवाद माथे पाठका सारू निजर है—

Full many a gem of purest ray s rene

The dark unfathom'd caves of ocean bear

Full many a flower is born to blush unseen,

And waste its sweetness on the desert air

(Thomas Gray)

राजस्थानी-अनुवाद —

घण मोती अणमोल, समेद रें तळें समावें ।

अथग अघारी खोह आव निजरा नहि आवें ।

घण रुपाला फूल, खिसं जा घोधी कळिया ।

मुरभें लोप मिठास, के'व अणदीठी कळिया ॥

(शक्तिदान कविया)

सन् 1958 मे इज कविवर 'तरुण' री हिन्दी कविता 'बटोही ठडी सांस न ले' री भाव म्हारें इतरी मन भायो, कं म्हें म्हारी कविता 'बटाऊ हार मत बीरा' मे दूजें रूप मे दरसायो । उदाहरण रूपी वानगी पेश है—

लक्ष्य जब रहता थोड़ी दूर—

तभी दुख घाते हैं भरपूर !

श्रेंधेरा बढ ही जाता भरे, सूर्य उगने से कुछ पहले !

बटोही, ठडी सँस न ले !

(‘तरुण’)

*

*

लावजे मती सकी लेस, बहजे वाट सत बाळी ।

न्याय रं पथ मे बहता, करं है राम रखवाळी ।

श्रेंधारी जोर देखावे, सदा ही रात ढळती रा ।

अजे ती गाँव है अळगौ, बटाऊ हार मत बीरा ॥

(कविया)

श्री ई एक विचित्र सजोग ही, कं सन् 1982 मे राजस्थान सहित्य-अकादमी, उदयपुर सू म्हनं ‘राजस्थानी पद्य पुरस्कार’ मिळियो, उण अप्रकाशित काव्य-संग्रह री शीषक ही ‘बटाऊ हार मत बीरा’ । उणी बरस ‘श्रेलीजी री अनुवाद’ भी पुस्तक रूप मे प्रकाशित हुओ (सन् 1982 मे), जिणरी विद्वाना घणी सराहना कर म्हारी उत्साह बघायी । म्हनं इण बात री आत्म-संतोष है, कं म्है जिण रचनावा नै अनस सू चाही, वानं सगळें साहित्य ससार घणी सराही । अंग्रेजी री जगचावी कविता ‘एलीजी’ सारू तौ जनरल वूल्फ (General Wolfe) रा ऐ बोल ऐतिहासिक अर अणमोल है —

“I would have rather written the Elegy than be able to take Quebec” अर्थात् म्है क्यूवेक जीतण रं बजाय ‘एलीजी’ लिखी होती ।

इणी भात हिन्दी रा विख्यात कवि-मनीषी ‘तरुण’ री रूपाळी रचनावा सारू कविवर वचनन रा ऐ आखर उल्लेखजोग है—“उनकी रचनाओ को देख सहसा बहसवधं की यह पक्ति याद आ जाती है—The light that was never on sea or land” अर्थात् वा आभा जकी समंदर या घरती माथं कठई निजरा नी आई ।

सन् 1989 मे महाकवि ‘तरुण’ री सगळी कवितावा ‘तरुण-काव्यग्रन्थावली’ रं रूप मे प्रकाशित हुई । पाचसी पृष्ठा रं लगटनं इण अनूठे ग्रन्थ री भूमिका विख्यात विद्वान् डॉ विजयेन्द्र स्नातक लिखी अर भारत रा उपराष्ट्रपति श्री शंकरदयाल शर्मा रं हाथा उणरी विमोचन हुवी । म्है सहज भाव सू डॉ. ‘तरुण’ री चार-पाच कवितावा री राजस्थानी मे अनुवाद कर दियी । राजस्थानी भाषा, साहित्य एव सस्कृति अकादमी, बीकानेर री पत्रिका ‘जागती-

जोत' (मन, अप्रैल 1989) में विद्वान् सम्पादक श्री चन्द्रदान चारण म्हारें उष
 अनुवाद नं पर्ण चाय मू प्रनागित कियो । उषी प्रसंग में बाध्य प्रेमी मित्रा री
 पा राय सुणी. मं बेई साहित्यकार ती गुट वणाय घर प्रपार रं वळ मायं इज
 महानता री छाप सगायां दुगदुगी यजाधं, ज्यांग घणो तन्त नी सत्वायं, पण
 दूर्जी कानी राजस्थान री घरती रा जाया जतमिया मनीपी हों 'तग्ण' जंठा
 महाकवि ज्यांरं मयदां मे ताजगी, भावां मे तग्मयता, भापा मे शोज घर लोच
 है तथा घतस नं सादोलित घर उस्ताहिन करण री भरपूर सामरप है । ऐहं
 सरस घर मिरं रचनाकार री भात भातीनी कवितावा री राजस्थानी में अनु-
 वाद होणी चाहीजं । उषी प्रेरणा मू म्है श्री निश्चय कियो घर दिसम्बर
 1990 ई मे कवियर 'तग्ण' री लगमन पचास हिन्दी कवितावां री राज-
 स्थानी रूपान्तर कर दिया ।

इण बाध्य-सग्रह री शीर्षक 'घरती घणी रूपाळी' मूळ रचनाकार हों 'तरण'
 री पसद मुजब रागियो है, जिणमे बाध्यात्मक लय री दृष्टि मू 'रूपाळी' नं
 'रूपाळी' लिखियो है, ज्यू हिन्दी में रूपा मू 'रूपहली' शब्द वणं, अन्यथा शुद्ध
 रूप तो 'रूपाळी' ह्वं । मनीपी डा मनोहर शर्मा इण पुस्तक री प्रस्तावना में
 सब ठीक 'घरती घणी रूपाळी' लिखियो है, सो सो उषी सही रूप मे छपियो
 है । इण पुस्तक री कवितावा में छन्द, लय घर भाव रं साये ही घणकरी
 मोहरा मेळ भी मूळ रचना री इज कायम रागियो है, जिणमू उणरी आत्मा री
 सरूप सत्वायं । सारी रूपान्तर पगत म्हारो है, जिणमे राजस्थानी भाषा री
 प्रकृति मुजब मयदां रं घडाव घर जडाव मू मौलिकता री भळक भावं ।

मव मू पैली 'घतस उछाह शीर्षक राण्ड मे महाकवि 'तरण' मानरें रं
 हत-हुलास, उमग-उछाह घर प्रीत-रीत री मीठी तथा मरमोती छविवा रा
 चित्राम दरसाया है । कायर मिनल प्रेम रं पय री मारमू नी वण सकं, क्यू कं
 त्याग बिना अनुराग नी ह्वं । कवि रा ते बोल कितरा प्राणवन्त है—

मूळ नं जा फूल भावं, ज्वाळ नं जयमाळ,
 घामुवा नं कहे मोती, रुदन नं सगीत ।
 वो करंला प्रीत ॥

'मनवार' म कवि कुदरत री फुलवाडी मे भणकता भेंवरा, परभात रा
 पछीडा, वसन्त री कळिया, नदी तट री लहरा घर दिवर्न री लोय मू जीवन
 नं सायंक करणिया गुणा री हेताळू चाहना प्रगट करी है । जथा—

मभ रंण शेंघारी मे बळती, दिवर्न री लोय म्हनं ही ती,
 दूजा रं हित निज जीवण री, करणी बलिदान सिखादी नी !

एक रळियावणी अर रगभीनी रात मे हुई मीठी मुलाकात री सरस स्मृतिया 'कितरी मधुर वा रात ही' मे दरसाई है, जकी भूनाया नी भूलोजै । ओळिया मे मानों रस घोळिमी है—

हा प्राण सावण ज्यू हरधा, हा वठ गावण सू भरधा,
 हो तन बढम्बी फूल ज्यू, मद री सघण बरसात ही ।
 कितरी मधुर वा रात ही ॥

उड सपन रा पल वे गया, हिय वेदनावा दे गया,
 म्है समझियो हो साच जिणनै, सपन री वा बात ही ।
 कितरी मधुर वा रात ही ॥

'मद-मार' कविता मे दिल रै दरियाव मे हेत री हिलोरा अर रग री तरग री सुरग मरसाव दरमायी है, तो 'चुपचाप' मे जीवण रै खटमीठे साव नै धर्ण चाव सू अगेजणै री भाव जतायो है । 'विग्ह मिळण' मे समदर मे दोय तिणकला री रमण रीळ अर उमडती छीळ रै ओळावै सजोग अर विजोग म कुदरत री गत प्रगट करी है । जीवण रै जधारथ नै सकारथ दीठ सू वरणता कवि सबदा मे मीठी चासणी भरी है । ज्यू —

आज आप मिळ गया ज्यू, मिळै दो जळधार साथे ।
 सग यहता जा रया हा, हेत री मनवार साथे ।
 दो घडी री आँ मिळण है, वळे विरहण रात व्हेला ।
 इण जनम री मधुर यादा, जा पछे अज्ञात व्हेला ॥

इण मनीपी रै अतस आलोच मे ई विराट-वाल्लोच री भाव है । 'म्हने एकली ई गावण दी, निज आप मे खो जावण दी' अथवा 'एक वार बस इसी गायलू, खुद नै ई खुद माय पायलू' जेही कडिया म इणी दीठ री दरसाव है ।

इणी भात 'लौ, कवि री मन खोल दिखाऊँ' मे कवि हृदय री कोमळता, विराटता, अपणास अर मिठास री मू घी मेळ है । जठे आसू रा मोती, बसन्ती सपना, गीता री लडिया अर ऊजळे हेत री उजेळ है । 'दोय चिडिया' एक छोटी-सी रूपाळी रचना है, जिणमे सीयाळ रै टाढे रैळ मे काटाळ अरुद्वे अरुद्वे दोय बिडकलिया मेह सू नूपती फूमती लखावे, जिणने देख कवि हिंसाळू जप मे रसाळू वातावरण री आस जगावे । जया—

इण हिंसा वाळ जग मे, आँ प्रेम बतावी पछी ।
 सुरग रै हेत री साचाँ, सदेस गुणावी पछी ॥

हों 'तरुण' जीवन रा चितेरा है, इण वारण वारें महताऊ मुक्तका मे पण अनुभव रा नग-कणूका घणरा है ।

दूजे लण्ड 'जूझनी जूण' री कविनावा मे मानलें रें सघर्ष पथ री महिमा रा चूप चूपाळा चित्राम है । 'मरमीली पीड' मे जीवन रा एक अछूती घर ऊजळी पासो दरसाय कवि दरद मे हमदरद वण विप नें इभरत वणावण री जुगत बताई है । इणमें आसू रें उपचार, जरणा रें सतकार घर कवि रें सपना रें ससार री इधकाई दरसाई है । सरूप री एक अनूप नमूना—

विघना रचिया लाखा ससार गुरगा,
ज्या माय चराचर वसे जीवडा चगा,
पण वेमाता रें जग कवि रें सपना सू —

इधकी सरूप ससार नही होणें री ।

इणी भात 'सघर्ष री पथ' मे सांस्कृतिक जीवन मूल्या रें प्रति अडिग आस्या राखता थका कवि हर भात री अबलाई नें अगेजणी चार्च । उण पथ मे ती जीत जिगड़ी हार, पार ज्यू मभधार, पूल ज्यू अगार घर राख ही सिणगार हुय जाव ।

महाकवि तरुण रा उद्बोधन गीत ती घणा चावा अरठावा है । इण भात रा भोजस्वी घर प्रेरणादायक गीता री बीहळी रचना करण वाळी दूजी कवि इण बखत सायत ई हुवें । 'जाग म्हारें जीवन री भाग, 'लोह पुछप थू रोवें क्यू है' अर पछी । पिजरें रा तोड वार जैडी कवितावा म कवि समाज रा बघणा नें तोड स्वाधीन होवण री गत बताई है । मिनख नें आपरो भापो ओळखावण अर बळ बघावण मारू ऐ बोल ती मातिया सतोल है—

पारी भृगुटी तणा इसारा, करे वीजळी ज्यू पळकारा,
भाखर नें ठोकर मारणिया, भार विथा री डोवें क्यू है ?
लोह पुछप थू रोवें क्यू है ।

बदी जीवन अर शोषण रें प्रति विद्राह तथा पीडित मानव रें प्रति करुणा रें साथ ही क्रांति री स्वर गु जायमान हुवां है । जया—

क्रांति रा खेलू इधका खेल ।
भाट सीयाळें विरखा भेल ।
परव है भर जोवन री आज,
खेलणी चाहू म्है निज पाग ।
जाग म्हारें जीवन री भाग ॥

हों 'तरुण' रा गीत तरुण-वर्ग में एक ताजगी, जीवट अर जोश री भावना भरण रा महताऊ मत्र है । 'श्री चट्टाण ज्यू मल्लाह' रचना मे सभार-मर्मंदर मे उमडत तूफान, ज्वार, भँवर-जाळ अर विकराळ ग्राह री परवाह किया बिना पार होवण री अडिग आस अर आतम-बळ री उजास बाधावा रँ बवडर मे मारण री सकैव देवँ । 'मिनखापण' मे मिनखाचार री महिमा अर उणरँ अभाव मू हुवोडी शरण दसा री चितहरणौ चित्राम दरमायी है । कवि रँ कथन मुजब आज नर नारायण वेश नी है, हेताळू मन्देश नी है, भीठा पछीठा री देश नी है, क्यू कँ मिनखा मे मिनखापण शेष नी है ।

'यँ अजे नही देखौ जीवन' मे मिनख अपारँ री टेडी-मेढी राहा, दरद री आहा, जँर रा घु ट अर अक्काया री अखूट पँडिया री सकेत कर वा मिनखा नँ सावचेत किया है, जके जीवन नँ सुख री सेज अर हुलास-हेज री इज रूप मानँ । कवि रँ सवदा मे—

लीना न हळाहळ रा गुटका, मुगत्या नी अतस डक गहण ।

यँ अजे नही देखौ जीवन ॥

कविवर 'तरुण' आपरँ जीवट अर जू भावण नँ उजागर वरण वाळा घण-मू घा मुक्तक पाठका नँ निजर वरँ, जके मरदाई अर मन री मजवूती री साख मरँ । जथा —

जलम मू जो ऊधमी हुय
मीत रा जवहा पकड नँ
खाच टण रा दात सारा
जिदगी री अरक पीवण नँ खडौ तँमार !
म्है—अर मानू हार ।

कवि रँ हियँ मे सामाजिक चेतना री ज्वार भखावँ । व्यवस्था री आपाघापी रँ अमू भर्त वातावरण मे समाज री साचेली तसधीर कोरण मे इण रचनाकार री कमाल निजरा आवँ । मानवता रँ मडाण अर राष्ट्र री आवरू रँ मुहुँ मायँ ती महाकवि 'तरुण' ईश्वर मू ई टकरावण री हीमत राखँ । 'हू भगड आयी' इणी आत री जोरदार रचना है । सरुपोत री आळिया देखी—

आज हू ईश्वर मू भगड आयी ।
सोने रँ सिघासण मायँ पौढ्या हा देव ।
अर, तावड मे उभराणी बहण री आपणी देव ।

मैं तो फगत इतरो इज कयो होँ—

अवार सिस्टी रो वाम-काज टीक नी चाले माई-वाप ।

चरचा गरम है—

सत्ता अर अमीरी रे घणा बलू हो रया हो आप ।

'राजनीति रो साभर भील' रे प्रतीक रूप मे इण जुग रो रळपट राज-नीति रो पोल उघाडी है, तो 'अतस-कथा' मे आज रे मिनख रो मजबूरी रो मरमीली चित्राम, जिणरी छाती माथे अमू भणी रो सिलाडी है । बाळपण मे तो सिखायो हो कँ मिनख सिस्टी रो सिरमौर है, पण जीविया ती सखावै जाणै कोई ढोर है । थोरै आडम्बर अर दिवावटी जीवण सू ऊव कवि कुदरत रे प्राणण मे खुलै मन मू जीवणी चावै । 'घोखी हुयो' कविता मे ओ इज दरद निजरा आवै । जया—

सिस्टी मिळी—सूअरा रो वाढी, खतरनाक खाडी,

आदमी—रगत रे नाडै मे तिरती, पडियो पाडी ।

'साप रेवास-राभो' प्रतीक रूप मे एक व्यंग-रचना है, जिणमे आस्तीन में रैता थका छळ अर अमरोसै मू जीवण गुजारतै प्राणिया रो असलियत उजागर की है ।

'कुदरत रो कोरणी' खण्ड रो कवितावा मे प्रकृति रचनाकार रे जीवण मे आघार बण नै आई है । घरती रो सुरगो सरूप, रितुवा रो रमभोळ, मानखँ अर कुदरत रो अनादी मेळ इत्याद रे भोळावै हिवडै रो हाट मे कुदरती रमेकडा रो रूपाळी रगत दरसाई है । इणमे कवि कुदरत मे अर कुदरत कवि मे समायोडी सखावै । इण फूठरी फुलवाडी रे विना मन मिरगली थोथी थळिया रो डारण डाभिया मे किण भात 'भटकली ? 'प्रकृति जीवण रो आघार' रो ऐ कडिया—

जे घरती पर रग विरंगा, मुसवाता फूलडा न होता ।

हरियाळी रो हलक लिया, नदिया काठे रुंखडा न होता ।

*

*

तो म्हे मूग ज्यू भोळा मानव, तिरसा हुय रवकता टीकता ।

थोरै थळ रो डाजी ज्यू जग, एक घडी भी किया जीवता ?

'घोरां रो खादणी मे दिन भर प्राण वरसावनी लूवा रो ठोड मखमल ज्यू कँवळी वेकळू रेत किण भात सीतळ, मुहावणी अर मनभावणी वर्ण, राजस्थान

रो जायोडो कवि ईज ऐडो रूपाळी कोरणी कर सर्व, घर भावा रा रग भर सकं । इणी भात 'सावण' कविता मे रिमभिम मेह, हरियाळी रो हलक गीता रो गुज घर मोट्यारा रो मस्ती भरी उमग रं साथे ही भरपूर जमानं रो प्राप्त घर जोवन-मदमाती भिन्नडो जोडो रो हेन-हुलास मिळ गविडू जीवन मे नवी विश्वास जगावं । लोक-जीवन रो ऐडो सुरगी दरसाव श्रीमार्त रं चाव मे मिळ सोनं मे सुगघ रो भाव दरसावं ।

'टावर रा चित्राम' मे ती जाणं नंहे वाळ घर ममताळू मायड रो नेह-निरभरणी रो घाभावरणी रगील रील दरसाई हे । विलतं फूल ज्यू मुळवतं वाळ रो मामूम किलोळा रो इतरी भीणी घर लाखीणी चित्राम कोरण रो कळा आज ताई किणी दूजं कवि मे देखण मे नी घाई हे । सुन्दरता घर ममता रं बिच मे रमता सरस भावा रं मुजब सु वाळा सवदा रो वानगी निरखणजोग हे—

बेसडा मू घ चूम घण नेह
उघाडी भरी फूठरी देह
पगलिया हाथ फेर सुबुमार
कद्रे थापलनी करती प्यार

दे रही मायड हाचळ वाळ, हिर्यं मे भरियो हेत हुलास ।
करती वाल्हा रो वरसात, उमडती अतम नेह उजास ॥

इणी भात 'दूर काळें वादळा में' कवि रो सुरगी घर सपनीली कल्पना रो उडाण हे, जिणमे घटारं जळतं जळवायु सू दूर खुलं घामं मे खुली पाखा सू उडणं रो घोट म स्वाधीनता रं सुख रो सकेत सुभट घर सप्रमाण हे ।

'माटी रो तोरम' शीर्षक खण्ड मे गावेडू भायका रो भळक रं साथे चठारं मिनवाचार रो सरूप, कुदरत रो रूप, प्रीत रो रीत घर घरती रा गीत गू जता सुणीजं । 'म्हें वनवासी होतो' म आज रो सभ्यता रं घाडम्बर घर खोखलें रूप मायं चोट करता कवि आद्र उजास घर खुलें आकास रं तळें मस्त घर भरदांनी जिदगी रो भरपूर रस कस लेवणवाळें वनवासी रो नामी घर घमामी कल्पना की हे । 'मुक्ति-कानी' एक इण भात रो रमणीक रचना हे जिण में आडम्बर घर छळ-कपट सू अळगी शान्त घर एकान्त ऐडी ठोड तलासण रो कामना हे, जठं न तो ठाणी ठगवाडी हे, न ईरखा घामना हे ।
जथा—

करी पयाणी जठं छळें नी, हिवडें नै हिवडो रगटाळ ।
हाल हिमा ! इण निदुर जगत सू, दूर कठई घोडी ताळ ॥

'माटी रा घर' 'गावेडू गोरी,' 'कामेत्तण' इत्याद कवितावां मे कवि गावेडू जीवण रा ऐडा मरमीला, रसीला, मनभाऊ घर महताऊ चित्राम कोरिया है, ज्यामे भीणा विम्ब घर लोक सस्कृति री मू घी मेळ है । महानगरां रं कोळाहळ घर हळ्याहळ भरियै विडरूप वानावरण मू दूर गाव-ग्वाडी घर खेत-खंडां मे मानलें रं हिवडां मे हेत री हमेळ है । 'गावेडू गोरी' रं रूप सरूप घर कर्त्तव्य री चूप री एक क्लक देली—

किणरी भोवात, सर्व कोई खोटी निजर सू भाळ,
उद्दम री देवता । घघं लागी है परमाळ ।
घरटी फेरी, गाय भैस मेळी, रोटिया पोई पकाई
गीगलें नै मेल्पी है पोमाळ ।

जठं करसा हळोतिर्य री हलस मे तेजो गावं घर गुडळा वादळा नै देख अलगू जा वजावं, उण वखत वारी घात्मा री आणद पगा म नाच, कठ मे राग घर आख्या मे अनुराग वण जावं । चील हूं ज्यू वघियोडे डील री मोरडी मस्त मोरडी ज्यू ठुमकनी सग्वर पाणो नै जावं, जद हिचकी री गोदणी तथा घडे घर घट री सुघडता, दमकती थकी निजरां घायं । 'माटी रा घर' मे रं वण वाली एक मतवाळी घण री अल्लूती रूप निरखण जोग है—

डाबर नैणी रं रूपाळें उण उणिगारं ।
हिचकी हेठें मड्यो गोदणी छिव सिणगारं ।
मतवाळी घण रा उळ्ळयोटा भेंवर वेसडा—
गाला री तिल निरख हरख नै मर थुधकारं ॥

कविवर 'तरुण' रं इण रूप विधान मे सुन्दरता रं साथे सात्त्विकता री अनूप इधकाई है । अम री महत्ता घर कुदरत री सुरगी सत्ता रं साथे ही संगे मू कळीजियोडा नाड घर निरघन मिनलां रं मारू रचनाकार आपरी कीरप घर करुणा पण भरपूर दरसाई है । इण खण्ड री छेडली कविता 'दाय आयगी' में कवि घरनी रं प्रति चाव लगाव घर परलोक रं वैभव-विलास मारू अलगाव भाव जतायी है । अठा री भूख मे ई घव घर तिरस मे ई तृप्ति है । इण सजोड कविता री निचोड भो है—

चाहै की कंबो, आ जमी, आ जिदगी, दाय म्हनं आयगी ।
लखावं है—ज्यू,
लें'र रं छोटे सं गीत गाईजतं छत्रीनं छिन मे
आभं री सगळी दीलत—
घरे वंठा ई लनं आयगी ।

घामिरी खण्ड 'विराट-वदन' मे भक्ति भर अध्यात्म री रचनावा है । 'प्रीत' नविता सू शुरू हुई घा पोधी 'घरम री मगळ जोत जळें' ताई लौकिक प्रेम सू धलीकिक प्रेम ताई री पावन यात्रा है । सावरिये री दिव्य दृष्टि पडना ही घाणद री भळ वूठी भर भक्ति री भागीरथी मे जगत रा जाळ-जजाळ भर घाल पपाळ सगळा ई बहग्या । कवि री कथन है, कं राम-विहूणा घन घाम किण काम रा ? अतस री घा इज भरदास है, कं भगवान कमळ-नयण रं चरणा री प्रीन, उणरी ऐंठयोडो नवनीत भर उणरी वसी री सगीत मिळ जावें, पछें वाकी चीजा भलाई विपरीत मिळ जावें । आत्मा परमात्मा दोना री प्रीत नदी री इण खण्ड मे भूरपूर प्रवाह है भर महाकवि 'तरुण' री घा इज चोळी-प्रनोली चाह है—

प्रीत री सरस निभाया रीत, खेल जीवण री खेल भळे ।

घरम री मगळ जोत जळें ।

समग्र रूप मे घा इज कंवणो है, कं राजस्थान रा रतन महाकवि 'तरुण' रं काव्य मे एक नवी-निराळी छवि है । वे घापरं ढग रा एक अनूठा भर अनुभवी कवि है । वारं काव्य मे तरुणाई री अरुणाई है, ताजगी भर तेज है, घरती री गुमेज है, हिर्य री हेज है, जमी सू जुहाव भर भक्ति री भाव है । मानवता री सदेश भर भारतीयता री परिवेश है । दूर्ज मबदा मे कवेसर डॉ 'तरुण' री कविता मे वारी आम्हा री उजास दरसं, जकी रसज पाठका रं अतस नं परसं । घापरी अतरदीठ सू सबद रं मरम भर काव्य री आत्मा नं तलासण वाळें इण कवि रतन री रचनावा मे वारं बहुआयामी व्यक्तित्व री विराटता लखावें । इणी कारण वारं सबदां में जीवण री अरक निजरा घावें । कविता वारी जीवण है, सजीवण है । खुद वारं सबदां मे 'जो भी है सो ऐ है'—

घाभाचूक, दरदभरियो ज्ञात, अज्ञात —

बस, घा इज है म्हारी कविता, म्हारी गायन हदन ।

म्हारी इण जनम री बात ।

(डॉ 'तरुण')

'तरुण'-कविता-कामणी राजस्थानी वेश मे घणी रूपाळी लागे, इण री सरूप शोभा पसरें आगं सू आगं, इणी भावना सू रूपान्तर कियो है भर मूळ रचनाकार अनुमति रं साथे ई सपळता री आशीर्वाद दिमो है । घा अनुवाद करती वेळा म्हनं वा ईज भाव-भूमि लखाई, जिणमे डॉ 'तरुण' ऐ भात-भातीली मरस कवितावा बणाई । म्हारी ती काव्य-सिरजण री घा पवको अनुभव है—

घरती घणी रूपाळी

(दूही)

मुख दुग्ध रं उर्ध्व गितर, घण जीवन रस घोळ ।
घतस मे जद उमडसी, कविना तणी विलोळ ॥
(डॉ कविया)

अन्त मे, म्है राजस्थानी-साहित्य रा विख्यात कवि-मनीषी श्रद्धेय डॉ मनोहर शर्मा रें प्रति हार्दिक आभार प्रगट करणी म्हारी पुनीत कर्तव्य समझू हें, जिका इण पुस्तक 'घरती घणी रुपाळी' री घणी रुपाळी प्रस्तावना लिखी । देश रा चाखा अर ठावा विद्वान् डॉ भानन्दप्रकाश दीक्षित, डॉ नागरमल सहल तथा श्री कलाशदानजी उज्ज्वल I A S (Retd) री म्है अन्तस मू आभारी हें, जिका आ पोथी पत्र नें आपरी अणमोल सम्मतिया मू म्हारी उत्साह बघायी । महाकवि डा तम्णजी मार ती आभारी मूं ई बोई भारी सवव व्है जद आपें । ऐडा महान् साहि-यकार सारु तो ईश्वर मू आ इज अरदास हें—'जीवेम अरद मतम्' ।

राजस्थानी साहित्य रा विद्यार्थिया अर काव्य-प्रेमी पाठका नें आ पोथी दाय आसी । इणी विश्वास रें माथे—

जठ मुद 11 (स 2048)
कविया-निवास
पोलो II, जोधपुर (राज)

शक्तिदान कविया



डॉ रामेश्वरलाल खण्डेलवाल 'तरुण'

जन्म सन् 1919, भीलवाडा (राजस्थान)

शिक्षा एम ए (काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, 1943, प्रथम श्रेणी में प्रथम), पी एच डी (1955) तथा डी लिट् (1965) उपाधिया (भारत विश्वविद्यालय सू) ।

अध्यापन 37 बरसा ताई । सरदार पटेल विश्वविद्यालय (गुजरात) तथा कुल्लोत्र विश्वविद्यालय (हरियाणा) में 15 बरसा ताई हिन्दी-विभाग का अध्यापक और अध्यापक, दोय वार कला सहाय का डीन (अधिष्ठाता) रया ।

यात्रावा थाईलैण्ड और जापान की साहित्यिक-सांस्कृतिक यात्रा की (1971), तथा अमेरिका, इटली, पश्चिमी जर्मनी की शिक्षण सस्थावा कानी सू भाषणा साह निमन्त्रण ।

पुरस्कार उत्तरप्रदेश सरकार सू काव्य, समीक्षा और शोध-ग्रथा साह 'तुलसी पुरस्कार' समेत च्यार वेळा सम्मानित हुवा ।

रचनावा (काव्य संग्रह) 'प्रथम किरण', 'घूप दीप', 'हिमाचला', 'आधी और चांदनी', 'हम शिल्पी सत्रास के', 'खूनी पुल पर से गुजरते हुए' । 'तरुण काव्यप्रथावली' में आपरी सगळी काव्य एकठ है । शोध-समीक्षा का मौलिक और सम्पादित मोकळा ग्रथ तथा हिन्दी अंग्रेजी

मे सँकडा लेख प्रकाशित है। 'मूरज डूवते की बदलियाँ' (1987)
 मे डॉ 'तरुण' रँ ललित गद्य री रळियावणी रळक है।

लारना 50 बरसा मे रचियोडी सगळी चोम्बी अनोळी कवितावा री सुरगी सयह 'तरुण काव्यग्रथावली' है। लगभग पाचमी पृष्ठा रँ इण ग्रथ री विमोचन हुवी भारत रा उपराष्ट्रपति महामहिम डॉ शकरदयाल शर्मा रँ हाथा, 21 जून 1989 नँ नवी दिल्ली मे। इण ग्रथ री भूमिका लिखी है हिन्दी जगत रा विख्यात विद्वान् डॉ विजयेन्द्र स्नातक। भारत रा अनेक सिरे साहित्यकारा महान् कवि डॉ 'तरुण' री रचनावा री घणी घणी मराहना की, ज्यामे प माधनलाल चतुर्वेदी, प विद्याधर शास्त्री, प नन्ददुनारे वाजपेयी, वाबू गुलाबराय, सुमिश्रानन्दन पत दिनकर, बच्चन, प्रज्ञेय, अचल इत्याद विशेष उल्लेखजोग है।

डॉ रामेश्वरलाल खण्डेलवाल 'तरुण' रँ काव्य कृतित्व अर व्यक्तित्व मार्यँ भारत रा अनेक विश्वविद्यालया मे एम फिल अर पी एच डी री उपाधिया मिळ चुकी है, ज्यामे-अलीगढ, मेरठ, नागपुर, कुरुक्षेत्र, पजाब विश्व-विद्यालय तथा उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद रा नाम प्रमुख है। कवि-वर तरुण रँ काव्य मार्यँ मगध विश्वविद्यालय, गया मे डी लिट उपाधि सारू शोध कार्य हो रयी है, आ घणै अजस री बात है।

हिन्दी-जगत मे भात भात रा फंसनी वादा रँ विवादा अर वाडोटिया री घेरावशी सू दूर महाकवि 'तरुण' री आपरी न्यारी ओळखाण है। कस नँ जीवणों अर विय नँ इमरत बणाय पीवणों भारतीयता अर मानवता रँ उपासक इण चारुँ अर ठारुँ कवि री लक्ष्य है। सहृदयता, करुणा अर बन्धुता री त्रिवेणी रँ साथे जीवण री ऊर्जा अर जमी सू जुडाव री भाव 'तरुण'-काव्य मे हिलोरा लेती लखारुँ। राजस्थान री घरनी मे नीपजियोडे कवि-रतन 'तरुण' रँ अतस रा आक्षरा री अरुण आव सू गरकाव भावा री लाखीणी लडिया अनूठी अर अणमोल है। ऐडो मनीपी महाकवि राजस्थान री गौरव है।

अबार सोनीपत (हरियाणा) मे, नवीन काव्य ग्रथा रँ सिरजण मे लीन।

*

*

धरती घणी रुपाळी

प्रीत

वो करैला प्रीत साप्रत, वो करैला प्रीत ।

अगन पथ ऊपर सुरीला, गा सकै जो गीत ।

वो करैला प्रीत •

देह निज हृदी बणावै, पथ री जो खेह,

जीत मे है हार जिणरै, हार मे है जीत ।

वो करैला प्रीत

फूल नै जो सूळ आखै, ज्वाळ नै जयमाळ,

आसुवा नै कहै मोती, रुदन नै सगीत ।

वो करैला प्रीत

डूब नै मभधार मे, कह दै 'हुवौ हू पार',

आंधिया मे ऊरडै, जो धार सू विपरीत ।

वो करैला प्रीत

दाह दीवाळी जिक्ण रं, है मरण त्योहार,

तावडो चदण कपूर, समान जिणरै सीत ।

वो करैला प्रीत साची, वो करैला प्रीत ॥

मनघार

मदच्छक वायरिये मे खिलती
कँवळी वसत री थे वळिया,
द्विणभगुर जीवण माय म्हनें
मघरी मुसकान सिखादी नी ।

ओ मीठी चहक मचावणिया
परभात समे रा पछोडा ?
था जिसी सुरीली सरम म्हनें
निज जीवण गान सिखादी नी !

रे भँवरा ! म्हाने जीवण री
इण वांटा वाळी डाळी मे,
मँडराता भणकता नित ही
करणो मदपान सिखादी नी ।

ओ कडखँ हँदी लं'रा थे ?
हर धार पराजय हुया धकां,
लहरावण गावण री इधकी
लाखीणी तान सिखादी नी ।

मभ रँण श्रेधारी मे वळती
दिवले री लोय म्हनें ही ती,
दूजां रँ हित निज जीवण री
वरणो वलिदान सिखादी नी ।

कितनी मधुर वा रात ही !

तारां भरघो आकास ही,
हिवड़े अरूट हुलास ही,
बहतो पवन गहलीजतौ
छिन्न चांदणी छिटकात ही ।

कितरो मधुर वा रात ही !

हा प्राण सावण ज्यूं हरघा,
हा कंठ गावण सूं भरघा,
ही तन कदम्बी फूल ज्यूं
मद री सघण वरसात ही ।

कितरी मधुर वा रात ही !

उड सपन रा पल वे गया,
हिय वेदनावां दे गया,
म्हें समझियौ ही साच जिणनै
सपन री वा बात ही ।

कितरी मधुर वा रात ही !

सुख रा अमर वे अळप छिन,
आगे सदा ईं सूळ वन,
दिन रात हिवड़े कसकसी
आ बात किणनै जात ही ।

कितरो मधुर वा रात ही !

चीख अर चुप्पी

चावै मन—

उदध सगम री वेळा मे

गग री सैस तरग ज्यू

भीणै कठ साबत खोल नै हू

गीतडा गाऊँ अनाप-सनाप ।

कै वळे हू

भादवै री साभ चंदे री सुकोमळ

अणामणी-सी चादणी मे

वरफ री चादर लपेटघा

मगन सपना मे हुयोडी डू गरघा रे

रजत-सिहरा ज्यू रहू

चुपचाप ।

मद-भार

म्हारै हिवडै मद-गीता री,
एकल ही अधिकार होयग्यो ।
इतरी मद आयो फूला मे—
फूला नै ही भार होयग्यो ।

भाव भरीज्या मन मे इतरा,
पलका भारी होए लागगी ।
गळी रुध्थी आगळिया रुकगी,
वन्द वीए री तार होयग्यो ।

हियो धधकती दिवलां हुयग्यो,
नेह उमडियो इतरी उर मे ।
दीवटियो तां रयो कठै—
औद्याड सिळग नै छार होयग्यो ।

जीवण मद मे आज हिये री,
इतरी डूव चुकी है पाह्या—
थमग्यो है गुजार, कुसुम ही—
म्हारां कारागार होयग्यो ।

इतरी मद आयो फूला मे—
फूला नै ही भार होयग्यो ।

चुपचाप

पीडा सू दिनरात तडफ नै,
की ती मन री वाल कैयग्या ।
की जीवण नै सीस भुकाया,
जो आयी चुपचाप सैयग्या ।

मन मे मीठी आस सजोई,
रच्या रेत रा के घरकोल्या ।
पण पाणी री लैर आयगी,
हणा वणाया हणा बैयग्या ।

वन-वन भटक वापडै पछी,
चुण्या तिणवला रचियाँ माळी ।
आभाचूक ऊपडी आधी,
मन रा मगळा महल डैयग्या ।

चोच खोल नै आस लगाई,
पी पी रटतौ रयाँ पपैयाँ ।
पण निरमोही मेघ न आया,
नैण खुला रा खुला रैयग्या ।

ढळ्या विजोगी रा आसूडा,
घरती माथै वण्या ओसकण ।
जळ मे ती वे मोती वणाग्या,
आभे माय नखन ह्वैयग्या ।

विरह-मिळण

साथ थोडी ताळ रो है, थू कठे अर हू कठे फिर ।

इण जगत री डाळ म्हे,
दो पत्तिया ज्यू हिल रया हा ।
चादणी ऊया पवन रा,
पोखियोडा खिल रया हा ।
ऊपडंला आधिया जद,
थू कठे अर हू कठे फिर ।

आज आपे मिळ गया ज्यू,
मिळें दो जळघार साथे ।
सग वहता जा रया हा,
हेत री मनवार साथे ।
जद मिळाला सिंधु मे,
तो थू कठे अर हू कठे फिर ।

दोय दिस सू पलक भर,
आपे मिळया हां आण यू ही ।
मिळें समदर माय ज्यू दो-
तिणकला सजोग सू ही ।
एक आई छोळ जे ती,
थू कठे अर हू कठे फिर ।

दो घडी री औ मिळण है,
बळे विरहण रात व्हेला ।
इण जनम री मधुर यादा,
जा पछे अज्ञात व्हेला ।

म्हने एकली ई गावण दी

म्है ई गाऊँ आर सुणूं म्हें,
निज आपँ मे खो जावण दी ।

म्हने एकली ई गावण दी ।

नेणा मे सजोय रसीला,
वीत्योडा चित्राम सजीला,
धीमै-मधरै सुर में मोनू -
गाता गाता मो जावण दी ।

म्हने एकली ई गावण दी ।

भरणीं री एकान्त किनारी,
वसी री सुर लागे प्यारी,
नवमी रै चदै ने म्हारै-
मन री मुलमुल धो जावण दी ।

म्हने एकली ई गावण दी ।

एक वार वस इसी गायलू ,
खुद ने ई खुद माय पायलू ,
जुग-जुग सू वीछडियो तन-मन-
साथ पलक भर हो जावण दी ।

म्हने एकली ई गावण दी ।

लौ, कवि री मन खोल दिखाऊँ ।

अतस जग री रग विरगी
घरा निधिया अणमोल बताऊँ ।

लौ, कवि री मन खोल दिखाऊँ ।

औ देखो आसू री मोती—

अमिट आव जगमगती जोती ।

मीठ गडाय'र देखो इणमे,

औ भूगोल खगोल दिखाऊँ ।

सरस वसती सपना निरखी—

ऐ म्हारै अतस रा परखी ।

सोनल वादळिया ज्यू प्राची-

दिस मे करत किलोल बताऊँ ।

औ है देखो प्यार सुनलो,

जगत सुरगें उपज्यी पैली ।

कचन ज्यू चमकै दमकैला—

लौ, कण-कण मे धोल दिखाऊँ ।

लौ गीता री लडिया प्यारी—

यू ती हळकी पण है भारी ।

सूरज चाद तणै ताकडिये,

सुरग-मुक्ति सू तोल दिखाऊँ ।

औ पूनम री नही गिगन है—

भाव भरघौ औ कवि री मन है ।

वह जासी जळ थळ अम्बर लौ,

दोय चिडिया

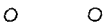
रन रोही मभ मरुथळ रं,
कटाळ भाडकं माथं ।
पीळं वादळ दो चिडिया,
चूमती भूमती साथं ॥

है ढाल पान ठठरिया,
ठाढे रंळें तन कपें ।
पण वे तो रस मे रुच रुच,
अतस री प्रीत पयपें ॥

इण हिंसा वाळें जग मे,
श्री प्रेम वतावो पछो ।
सुरग रं हेत री साची,
सदेस सुणावो पछो ।

मुक्तक

कागदी इण फूल मे मकरद लावौ,
जिदगी रै गद्य मे की छद लावौ,
मेल आभै मे हवाईज्याज सगळा—
धरा माथै सुरग री आराद लावौ !



धरती माथै मिनखा सारू, सुख री सब सेमान रहै ।
पीवण मद, सीरावण मीठी, जीमण सुधा-समान रहै ।
रैवण नै रमभोळ रणकती, अम्वर अडती भवन हुवै—
पण है जग जीराण, अठै जे नी कविता री गान हुवै ।



हिये री मोल

एक चूडी तूटता ही, हाय ! हो जावै अमगळ ।
मेघ मे विजळी कडकता, काप ज्या सावती जगळ ।
भाग रै लेखै लगाता, एक तारी तूट जावै ।
अपसुगन हुय सायधण रै, हाथ दरपण छूट जावै ।
वाट दिवलै तणी बुझता, डर अधारै री सतावै ।
पण सुणै कुण भूटकी ? जे हियो कोई तूट जावै !

मुक्तक

या नैणा रं वीच सावळी पुतळी है,
जिणरं वीचो-वीच नैण री तारो है ।
इण तारै रं वीच घणी हरियाळी मे—
एव विरण रूपाळी आसण थारो है ।



म्हं असाट रा पैली वादळ,
जिणमे गीत, घुमड अर विजळी ।
तू चादडले ऊपर भिळमिळ,
भीणी धवळ भूमती वदळी ॥



प्राण म आर्या वसती ध्यान—
चंत हदी चादणी ज्यू वसरी री तान ।

जूं भूती जूण

मरमोली पीड

इमरत रा भरिया लाखा कळस वडाळा
तीई नी मिटिया जे हिवडे रा छाळा
जीवण री इण गत मरमोली पीडा मे—

आसू सू वध उपचार नही होणें री !

विधना रचिया लाखा ससार सुरगा
ज्या मांय चराचर वसे जीवडा चगा
पण वेमाता रै जग, कवि रै सपना सू —

इधकौ सरूप ससार नही होणें री ।

ह्वै वीणा तार घणें मीठें मुर वाळा
जो कर देवें हिरणा नै ई मतवाळा
पण तूटोडें हिय री वीणा-तारा सू —

वधतां अर कँवळी तार नही होणें री ।

कोई म्हानें दे देवें विप री प्यालीं
जिण मे राती ज्वाळा उठती दे भाली
उणनं चुपचाप पियै ती अन्यायी री—

इणसू चोखी मतकार नही होणें री ।

संघर्ष रौ पथ

जद नाव जळ मे छोड दी,
तूफान मे ही मोड दी,
दे दी चुणीती सिधु नै,
तो पार ज्यू मझधार है ।

गिण भीत नै वरदान ही,
मरणी लियों जद मान ही,
रणभोम मे पग दे दिया,
तो जीत जिसडी हार है ।

जद छोड सुख री कामना,
वर दी सहू म्हे साधना,
संघर्ष-पथ उर धारियाँ,
तो फूल ज्यू अगार है ।

ससार रौ पीपी गरळ
जद वर लियों मनडौ सरळ
भगवान शकर वण गया,
तो राख ही सिणगार है ।

लोह पुरुष थू रोवें क्यू है ?

नैणा रा ऐ होरा मोती,
थू माटी मे खोवें क्यू है ?

लोह पुरुष थू रोव क्यू है ?

थारी भ्रगुटी तणा इसारा
करै बीजळी ज्यू पळकारा
भाखर नै ठोकर मारणिया,
भार बिधा री ढोवें क्यू है ?

लोह पुरुष थू रोवें क्यू है ?

खुला पडघा पथ सारा थारा
घरती सिधु सितारा थारा
घरती फाड समदर नै मथ,
दास किणी री होवें क्यू है ?

लोह पुरुष थू रोवें क्यू है ?

देख हुवी परभात सुरगो
पाखडिया फडका हुय चगो
बद पीजरें रै सूवें ज्यू,
निबळी निजरा जोवें क्यू है ?

लोह पुरुष थू रोवें क्यू है ?

जाग म्हारै जीवण री आग !

जळा म्हारै अतस री दीप,
सुणादें अपणां दीपक राग ।

जाग म्हारै जीवण री आग !

हिये री जडता मिटे अणत,
च्यार दिन ती मिळ जाय वसत,
वहै रग-रग मे सोनल रगत-
लियां वीजळ, चिसुगारी, भाग ।

जाग म्हारै जीवण री आग !

लिया कोमळ कठा मे गीत,
चलू धारा सू की विपरीत,
परखलू ताकत म्हारी आज-
नाथता विसहर काळी नाग ।

जाग म्हारै जीवण री आग !

आति रा खेलू डधका खेल,
भाट सीयाळें विरखा भेल,
परव है भर जोवन री आज-
खेलणी चाहू म्हें निज फाग ।

जाग म्हारै जीवण री आग !

ठूठ सी म्हारी जीवण डाळ,
लदै नव कू पळ घणी रसाळ,
प्रीत री अम्बर उडै गुलाल-
भावना गावै अमर विहाग ।

जाग म्हारै जीवण री आग !

माग मे भरलें धू भरपूर,
लाल निज लपटा री सिद्धर,
दुहागण म्हारै मन री पीड-
जिकण ने दे दे अमर सुहाग ।

जाग म्हारै जीवण री आग !

मिनखापण

हिवडा मे काळो विप, नैणा मे ज्वाळा ।
रुपाळो मुख आराक डरावण वाळा ।
रंगियोडा रगता शस्त्र दुह हाथा मे,
रे । श्री तो नर नारायण वेप नही है ।
अव मिनखा मे मिनखापण शेप नही है ।

उठग्यो विश्वास घरा सू मिटग्यो भलपण ।
ज्या सू श्री जीवण हुतो असल मे जीवण ।
सतरगी पुमपा री फावें पखडिया,
पण, सुग्मीलें मद री तां लेण नही है ।
अव मिनखा मे मिनखापण शेप नही है ।

विज्ञान जागियो हुयग्या सब मतवाळा ।
जागी है अकल पट्या हिवडें पर ताळा,
घन रा भूखा पत्वर, दिल है नर नारी,
जीवण मे अव सवेदण शेप नही है ।
अव मिनखा मे मिनखापण शेप नही है ।

बिण ठोड गुम गयो दिव्य आतमा री गुजण ।
मानव री अणहद वो आणद चिरतण ।
नितरी नीरसता आतम सू आतम री,
पैली ज्यू हेताळू मन्देश नही है ।
अव मिनखा मे मिनखापण शेप नही है ।

जद मूस गई सरिता जग रें जीवण री ।
रम-नीर बह गयो रही रेत घन कण री ।
चट्टाण काकरा पट्या रुखडा नूखा,
हव मोठा पछोडा री देण नही है ।
अव मिनखा मे मिनखापण शेप नही है ।

पछी ! पिजरै रा तोड वार

धारी पारया मे ताती बळ,
कठा मे गीत गूज अदिरळ,
थू कीकर हाय हुवौ बदी-
वन वन रा कोमळ बळावार ।

पछी ! पिजरै रा तोड वार ।

थू पातरग्यी वा हरियाळी,
जाभरकै री छिव रूपाळी,
मनचायी फुर फुर उड जाणौ-
सोसनिया आभै आरपार ।

पछी ! पिजरै रा तोड वार ।

बदी हुय किम विसरचौ भोळा,
वे मस्त पवन रा हिचकोळा,
ज्यारी उमग रै रग माय-
वरसाय देवती सुर हजार ।

पछी ! पिजरै रा तोड वार ।

सोग्नन मैडी मे बदी वण
नित दूध भात रा लै जीमण,
ऐ कीकर भावै हाय थनै-
तज निज कु जा रौ फळाहार ।

पछी ! पिजरै रा तोड वार ।

आजाद थजे ही होय सकै,
पीळै वादळ मे खोय सकै,
भटकी दे तोड उडै जे थू-
इण पिजरै नै कर तार तार ।

पछी ! पिजरै रा तोड वार ।

ओ, चट्टाण ज्यू मल्लाह

पयाणी कियो थे किरा ओर !
छाया वादळा घणघोर,
छौळा मे भयकर रोर,
जळ री नही दीसै छोर,
भूखा तिरै है घण ग्राह !
ओ, चट्टाण ज्यू मल्लाह !

किरा दिस हुवौ आज वहीर !
भेटण सिंधु हदी तीर,
लोरण लाल छिप्रती भाल,
रग-रग जोस थाल-उथाल,
उर मे किसी अतरदाह ?
ओ, चट्टाण ज्यू मल्लाह !

थारै माय कुणसी आग ?
लागी केम अजकी लाग ?
वधती जा रयी थू वीर,
सहती ठड मेह शरीर,
दूवळ अग सैठी वाह !
ओ, चट्टाण ज्यू मल्लाह !

छौळा ऊभलं ऊताळ
आभं तणी आभड भाळ
जोजर पोत हदा पाळ
पसरघी अघवार विसाळ
कितरी है भयकर राह !
ओ चट्टाण ज्यू मल्लाह !

थें अजे नहीं देख्यो जीवण

वळयळता आमूडा न पिया,
ऊधडिया घाव हियें न सिया,
लीना न हळ्याहळ रा गुटवा-
भुगत्या नो अतस डक गहण ।

थें अजे नही देख्यो जीवण ।

पाळो नी उर मोठीस पीड,
मन में मुघरा नो रच्या नीड,
ढहता देख्या नी वदे अजे-
हिवडें सतखडा रग भवण ।

थें अजे नही देख्यो जीवण ।

थ मधुर गीत गुजार सुण्या,
सपना घण जाळीदार घुण्या,
फूठरा खिल्योडा पुसप चुण्या-
सज सीतळ सेजा कियो सुवण ।

थ अजे नही देख्यो जीवण ।

आसू देखीं, आहा देखीं,
सो दीवा कर राहा देखीं,
मळधार भेंवर म नाव भोक-
अधारें देखीं जळ मचळण ।

थें अजे नही देख्यो जीवण ।

अो जीवण सीधी सणक नही,
कोरी भेंवरा री भणव नही,
अधरात सम वावहियें री-
सावण रें थळ मे वृथा रुदण ।

थ अजे नही देख्यो जीवण ।

जीवण : मुक्ति या बंधण

म्है समझ सक्यो नीं, काई मानव-जीवण !
श्री जीवण मदभर मुक्ति, या कि कटु बंधण !

काई जीवण है मुघरी हण-भुण करतां,
आजाद गगनमंडळ गीतां सूं भरतां,
हुय रूप वसू घण कमळ कोप में मीठी—
है एक रात रौ भेंवरै खातर बंधण !

म्है समझ सक्यो नीं, काई मानव-जीवण !
श्री जीवण मदभर मुक्ति, या कि कटु बंधण !

या श्री जीवण है दिन नै रात निरंतर—
दोनूं मूंडां वळती लकडी रै अंतर—
वापडै कीट रौ वळणी है ज्वाळा में,
हुय जाणी वळ-भळ राख उठै वन्दी वण !

म्है समझ सक्यो नीं, काई मानव जीवण !
श्री जीवण मदभर मुक्ति, या कि कटु बंधण !

श्रीसद

रोणं सू तो दुख दूर नही होणं री ।
आसू सू पत्थर चूर नही होणं री ।
जीवण भर चाहै थे वृ वृ सू पूजो,
काळो वाजळ सिदूर नही होणं री ॥

ठडी आहा सू वदे न फूटं छाळा ।
बळतं आसूडा सू तूटं नी ताळा ।
फूका सू उडसी नही विवट चट्टाणा ।
ढोली पलका सू वदे न छूटं जाळा ॥

थे तो कॅवळी-सी वरुण रागणी छेडी ।
वा तोड सकी कद वोलो, पग री वेडी ।
उणने काटंला फगत हथोडी टाकी ।
सपना ज्यू कॅवळी नही, भाळ ज्यू वाकी ॥

आवी, काटा सब दूर कराला पथ रा ।
याधक, जीवण री महाविजय रै रथ रा ।
जो पग रै च्यारु मेर वीटिया बधण ।
वा माथै छिडकी मती अखत अर चदण ॥

जूंभार

म्है, अर मानू हार !
जलम सू जो ऊधमी हुय
मौत रा जबडा पकड नै
खाच उणरा दात सारा
जिदमी री अरक पीवण नै खडौ तैयार !
म्है—अर मानू हार !



मुक्तक

जद जद गिरघौ म्है अघं जळ वण नै गिरघौ,
जद जद उठ्यौ तो दियै री लौ-सो उठ्यौ,
जद जद बढ्यौ तो काळ रै रथ ज्यू बढ्यौ,
जद जद रुक्यौ वण पाव अगद री रुक्यौ ।



धू वी, धूड, धु ध, अघारो ।
यारो च्यारू कूट पसारो ।
पण इणमे ही चमक रयी है,
म्हारी आसा री ध्रुव तारो ॥



नीं मंजूर

जीवण नी मजूर म्हनै, सीधी-सो खेंची लकीर-सो,
चाहै वो भणकार भरघौ, मदरर सितार री तार ह्यो ।
गोळाकार पित्तज रेग्या सो, जीवण पण म्है नी लेस्यु ,
चाहै वन-वेलडिया ज्यू गहडम्बर घू परदार ह्यो ।
जीवण लेस्यु हू तो आधी, नही या तूफान सो,
जिणमे तडफण भै, जवाळा व्हे, गु जण, मेघ मला ॥ ११

आदमी री रगत

तावडें मे वा इज मनातन चमक

मोतिया मे वा इज दमक

कळिया मे पण वा इज महक

अर

ठडी ठडी नरम हिय हेताळू हरियाळी मे

प्रगट वो इज सनातन पिंड री जीवण रस इण जगत ।

वस, वदळ्यां है ती एक—

फगत आदमी री रगत ।

हमें नी रयो है

आदमी री रगत

लाल—

दाडम रा ताजा फूला ज्यू

वसन्त री या जेठ री ऊपा ज्यू, या

साभ ज्यू

या पळ्हास री दहकती सी व्हे

रूप हदी भाळ ।

लाल हो वो तदे—

घरती माथे जदे—

अन्याय री वात माथ

स्वाभिमान रे आघात माथे

आदमी री रगत खाय जाती हो

उवाळ —

ज्यू गेद खाय जावै

टिप्पी या उछाळ ।

राजमहल, वारादरो, कोट-कागरा या रणखेत
 आदमी रंतौ हा जद आन वान सारू सचेत ।
 खट्ट-खट्ट होण लागता हा वार,
 खणण खणण वाजण लागती तरवार,
 वह जाती काळी तामसी रगत नापाक—
 लगत हाथा हिसाब हो जाती ही साफ ।
 दखता ई देखता हरियाळी माथे
 वह जाती ही सिस्टी रौ अणचायौ रगत,
 अर भळे रह जाती तुरत ही—
 असमानी आभौ, चमकीली घूप, ऊजळी हास,
 मन चिट्टी अर भुगत ।

दिन वही या रात
 सूनी पगडाडो माथे ई आदमी चालतो ही नि सक,
 भूठ माथे रंतौ ही हाथ,
 अर मू छ मे तण्या रंवता हा विच्छू रा डक ।
 घरती माथे रंवता हा माई रा लाल,
 अर, जद आदमी रौ रगत हुती ही लाल ।

परगाळ—पीळी

वेपारा—लीली

सिझ्या रा—लाल

अर रात रौ काळी,

—पण हर्मे तौ किरडो वण आदमी रौ हुगयो भूडो ढाळी ।

साप : रँवास-रंभो

बिला मे रँता हा साप ।

सोच्यो—अठे तो रँव है घणी अधारी

बरसाळें पाणी भरोज ज्यावं

चालो, रूख माथें रँवा, चदण रें रू खडें, घणी सुभीतो हे ।

पण रूख खुलो घणी हो

पकडोजण री डर ई भारी हो ।

फेर सोच्यो— उठे रँवा जठे वईव अधारी ई व्है

चंदण री सोरम पण व्है—

विश्वास भरघा उसाम ज्यू मदभर ।

ठार सूं ई वच्चोडा रँवा

तातें रगत री ओग ज्यू

हियें री घडकण री सुरीली सगीत ई

की सुणण नें मिळें ।

की ओट मे अर की खुला भी रँवा ।

फँलाव सारु गु जाइस ई व्है ।

निधणीका अर आदिवासिया री भात—

सदिया ताई, जुगा ताई,

वचता लुवता, रीगता रवकता

कु डळी मारता, फू कारता,

हमें जाय नें पायो है रँवास एक—डोलक्स,

सावती जावती अर सुभीती फावती

सगळी सुविधावा जठे—आस्तीन ।

कळीसाज

कळीसाज

करलं ठाम ठीकरा भेळा

मिनखा रं घरा आगे दे दे आवाज ।

भगोली फूटोडी चाहै कूबी-काणी ह्वी

कोरा कटियोडी या जूनी पुराणी ह्वी ।

कळी सू चमकाय बगसावं नाज ।

चाली घमण घसीज्यो रागो

आग माथे वासण नै सडासी सू टाग्यो

खीरा बळता राता लाल

रागं अर साफी रो ही कमाल

त्यार हुवौ—पाणी मे पडता ई,

आवाज हुई—छण्ण

फटीचर भी ज्यू (ठस भला ई ह्वी)

कुरसी माथे बँठता ई—

आवाज करण लागं खण्ण खण्ण ।

इणामे की नी है चक्कर

ककर ही ती व्है है शकर ।

आज हू ईश्वर सू भगड आयी ।

सोने रै सिंघासण माथे सुख सू पौड्या हा देव,

अर, तावड मे उभराणी वहण री आपणी देव ।

म्है तो फगत इतरो इज कयो हौ कै—

अबार सिस्टी री काम-काज ठीक नी चाले माई-बाप ।

चरचा गरम है—

सता अर अमीरी रै घणा बळू हो रया हौ आप ।

इतरी सी ही बात,

पण, लिलाडी सळ घात, बोल्या साहू—

डोढ पासळी री पिटाट थारी आ औकात ।

म्हारै ठरकै माथे इण भात करै आघात ।

बस, बातडी की बढगी ।

भाळपूळा हुयग्यौ म्हें अर म्हारी लाचारी,

कम ताकत अर गुस्सी भारी,

ज्यू, म्हारै तन-मन री, अतस री नसां चढगी ।

‘हमें नी चढू ला थारै सोवने पावडिया साहू

सिस्टी रा पाळक, धारक नै सघारक

आपरी घाटपाट अर रुतबी,

आपनें इज भुवारक, भडाक म्हारै मू डै सू कढगी ।

सोच्यो घणी रही ईश्वर री बपोती,

मजूर है अब म्हाने चुणौती,

विराट रतना री खाण बमुन्धरा माथे, विवेकमत—

आदमी गमारै है आपरी पत ।

मानखे रै अजस री सवाल है निवेडी बहै न्यायसगत ।

राजनीति री साभर भील

रेत रं रस्तं गुजरता,
देखता जावा हा म्हे साभर भील—मीला ताई ।
खारी गध सू नाक भरता ।

अठे कठे पेड पत्ता, फळ फूल, भेंवर-गुजार ?
अठे तौ वस तीखी कडवी गध, हवा, खार,
लीला घोळा-गुलावी चिंगदा वाळें पाघरें पाणी री विस्तार ।
इणमे जो पड्यो कागद, पेड-पत्ती, गाभी-लत्ती—
उणरो तौ वस एक ई रूपवदळ—लूण, लूण, लूण, काई—
खारी लूण, कोसा ताई ।

साभर भील सू ई लावी-चौडी भळे एक भील है मुळ ई आकरी—
जिणमे सव समान है

फूल ह्वी या काटा, भाखर व्ही या काकरी ।

आस, सबध, मुळकण, प्रतीत

कळा, रूप, साधना, जीवण-मूल्य, प्रीत—

की न्हाख दी, सव उणमे गळ सड नै ही जाई

राजनीत, राजनात, राजनात ।

अधारी रात मे, वाढ मे गळें ताई पाणी मे डूवता—
नेसम ठोड सारू विखें पड्यो मानखो दोडें जिण गत—
उणो गत—'बचो बचो' करता सव भाग रया हा

पोटळिया मार्य ऊचार्या—

राजनीति री साभर भील मांय सू, धोळू सू बाधा भुवाया ।

ग्राज म्हारी निजर

म्हारें गाव रा सुरमीला वाची माटी रा
(म्हारी सासा अजे ताई चौतारें पलक भपाय'र)
म्हारें जलम घर री
छानडी माथें
माटी रा वेलूडा छजियोडा हा,
विचला ठीढा माय सू तोर री गत,
सूरज री किरणा री जाळ
सीध पाइप रें आकार ज्यू
तिरछी हुय ऊतरतो ही
वडू वें रें मिठियास सू भीनी म्हारें ममताळू आगणें
रिपियें रें आकार री
ऊजळ दूधिया सोवनें उजास री रिपियी सो जढतो जमी माथें
(म्हानें लुभावण) ।
उणमे—वाची माटी वाळें म्हारें घर मे—
मायड रें फू वतें चूल्है रें
अधगीलें ईंधण छाणा रा
भात-भातीला, घुघराळा, सोरभी वसीज्या,
नैण दोखी, काळी घु वी
छाईजण दूकती,
म्हारें घरेलू करुण जोवण रा पारदरसी चित्रांम सा कोरती ।
ग्राज वा इज करुण-पगडाडी ऊतरी है म्हारें नंणा मे,
म्हारी दीठ वण नै ।
तस्कर जुग रा अलेखू
उगरा चित्राम पण
खटकें है म्हारी आख्या मे ।
वा इज जूनो, काचें घर री किरण पगडाडी—
वण नै आयगी है
ग्राजूणी म्हारी निजर ।

घोखौ हुवी

ये तो कयौ हो—थावस हदँ सुर मे,

म्हारै कान मे—

सिरजणहार री उण रळियावणी अर सुरगी सिस्टी मे
धनँ मिळसी—

इमरतभरी हरियाळिया मे जीवण-केळ करता

धवळ फटिक ज्यू पारदरसी काया वाळा

माणक आबी रा मिनख !

आबदार मोतिया री किरणा ज्यू भिळमिळ बोली बोलता—

सिस्टी रा सिणगार

इमरतपूत—मानवी !

पण, मिळिया म्हनँ ती अठँ देखण नँ—

आधिया मे उडता कादँ रा फुगतारा ज्यू वापडा प्राणी !

बदूक रँ कु दा सू कूटीजता उघाडा नर नारी,

करता हाय वाणी !

मटिया उडदिया, बमपटकू जहाज,

पलटण, आक्रमण अर जुद्ध रा साज !

सिस्टी मिळी सूअरा री बाढी, खतरनाक खाढी,

आदमी—रगत रँ नाडँ मे तिरती, पडियो पाढी !

ध्रुव सू ध्रुव ताई धुवी अर लपट,

राती आख्या, हुकार, धोफ, चुणौती अर डाट-डपट !

—घोखी हुवी !

कुदरत री कोरणी

प्रकृति जीवण री आधार

जे धरती पर दूब न होती,
पखेरू गुजार न होती ।
हरी घाटिया मे मुळकती,
ऊपा री सिणगार न होती ।
सावण री बीछार न होती,
भरण मे सगीत न होती—
कोयल देती नही टहूका,
वसत री त्योहार न होती ।

ती जीवण रस वायडिया म्हे,
इण मरघट मे किया जीवता ।
पल भर वंठ कठई हित सू,
ऊघडिया दिल किया जीवता ?

जे धरती पर रग-विरगा,
मुसकाता फूलडा न होता ।
हरियाळी री हलक लिया,
नदिया काठे रू खडा न होता ।
चाद सितारा सू जडियोडो,
सोसनिया आभी नी होती—
धीमे मुधरे वायरिये रा,
भीणा सा भूलडा न होता ।

ती म्हे मृग ज्यू भोळा मानव,
तिरसा हुय रबकता टीवता ।
थोयें थळ री डाजी ज्यू जग,
एक घडी भी किया जीवता ?

जे मांनव रै खातर जग में,
सपना री संसार न होती ।
घायल हिवड़ै आंसू हंदी,
सुखकारी उपचार न होती ।
गीतां री वरदान न होती,
जे अंतस री तिरस मिटावण—
ढहतोड़ै हिवड़ै नै ठडी,
आहां री आधार न होती ।

तौ म्हे मरम-वेदना विखमी,
पांतर कीकर विखी पीवता ?
मनड़ै नै थावस दे आस—
नवादी ले-ले कियां जीवता ?

घोरां री घांदणी

दिन भर सू सिळग रयी ही,
तावढ री तिड भूमडळ ।
नभ मे वळखळती किरणा,
वरसाती ही दावानळ ।
आतक हुवं जिण गत सू,
अत्याचारी अघपत री ।
घोरा री इण घरती मे,
आतस री तप इण गत री ॥

जद हुई साक तो कुदरत,
वीभरती रूप विसरियो ।
लू बेस वदळ ने आई,
घर सीतळ पवन पसरियो ।
मिमकर नीवा री महकै,
अतस मे भरें उजेळा ।
वायरियो करे वसती,
कंवळें टावर ज्यू केळा ॥

सज आभे मे ससियाळा,
दीपत रूप दरसाती ।
प्रीतम सू प्रथम मिळण मे,
ज्यू सकें घण मुस्काती ।
वीखरग्या नभ सरवर मे,
घण धवळ-पुसप तारादळ ।
ज्यू चाद हस रें सारू,
रांमत रा मोती ऊजळ ॥

किण पथ सूं किण कीरप कर,
कीमळ करुणा वरसाई ।
भाळा में वळतै जग रै,
अंतस में सांयत आई ।
श्री कुण चूमै है जग नै,
अपणायत अमी-अघर सूं ।
करुणानिधानं ज्यूं आयौ,
ऊतर चुपकै अंबर सूं ।

दुनियां रै दुख सूं दोरी,
कुदरतपत आकळ-वावळ ।
छाती सूं चेप्या जग नै,
आयौ ममताळू आगळ ॥

सावण

इन्द्र देव री दया हुई,
दुनिया मे नव जीवण आयो ।
रिमभिम-रिमभिम बरस रयो जळ,
हरघौ-भरघौ सावण आयो ॥

धुमडै वादळ काळा-काळा,
ठडी हवा बहै प्रघळी ।
मोर पपैया बोल बोल नै,
गु जावै है वनस्थळी ।
घोर वादळा नं चादी ज्यू,
चमकं है चमचम बिजळी ।
खेता मे गावै है करसा,
गावेडू कठा कजळी ।

प्राणा मे भरियो हुलास घण,
नदिया मे जळ उमडायो ।
रिमभिम रिमभिम बरस रयो जळ,
हरघौ-भरघौ सावण आयो ॥

हरिये भरिये मैदाना रे पार,
फवी शोभा री घर—
लीलै रगा री भाखरिया,
लागं है कितरी मनहर ?
वा मार्थं घणघोर घटावा,
आवै ऊमड घूमडती ।
ज्या मे दूधा-बरसी ऊजळ,
धतका री पगत उडती ।

नदिया अर नाळा रे मिस,
ओ कितरी प्यार उमड आयो ?
रिमभिम रिमभिम बरस रयो जळ,
हरघौ भरघौ सावण आयो ॥

आवा तर नगर फूलाडा,
 घणा सावळा कुजा मे ।
 हीडा माड भूल तीजणिया,
 हिळ मिळ हरखै पुजा मे ।
 ऊपर मुधरी धुन सू तडतड,
 कॅवळी करती रग रळी ।
 पाना माथे पडती छाटा,
 मोती ज्यू दीसं उजळी ।

गह डम्बर धुरती नम मे घण,
 फेरु उमड-धुमड आयी ।
 रिमभिम रिमभिर वरस रयी जळ,
 हरघो-भरघो सावण आयी ॥

सीसहली दिराय पीहर सू,
 निज घण ले मोट्यार जवान ।
 चाल्यो जावं हरियं भरिये—
 कावड पगडाडी नादान ।
 वजा रयी है मुधरी वसी,
 तांन छेड दी मतवाळी ।
 लारें ठुमवा देती आवे,
 घण न्पाळी घरवाळी ।

हेताळू हिवटां रं सातर,
 नवी सँदेसी है सायी ।
 रिमभिम रिमभिम वरम रयी जळ,
 हरघो भरघो सावण आयी ॥

चिळकती वादळा विचाळें,
 आयमणी सिदूरी साभ ।
 धुवां धूंधळां दीसं खंडा,
 चेतं अगनी चूल्हा माभ ।
 तावाटें घेना पूछा रा—
 फटकारा देती आती ।
 मगरा कॅवळी हरी घास नें,
 चीथ खुरा चरती जाती ।

रुखा माथे चहकें पछी,
 जगळ मे मगळ छापी ।
 रिमझिम-रिमझिम वरस रयी जळ,
 हरघी-भरघी सावण आयी ॥

खेता सू घर कानी आवें,
 रिळीमिळी टावर टोळी ।
 भर लाया वे काचा पूख,
 काचरा फळिया री भोळी ।
 माथे भारी उखण घास री,
 हुलस दातरी ले हाथा ।
 गावेडू गोरडिया आवें,
 नेंन्हा वाळ लिया वाथा ।

राती चू दडिया मे सिमट्यी,
 ज्यारी जोवन गजरायी ।
 रिमझिम-रिमझिम वरस रयी जळ,
 हरघी भरघी सावण आयी ॥

टावर रा चित्राम

गिगन मे किळकें बाळक चाद,
पळापळ तारा ह्दो गात !
रसीली खिली चादणी रात !

दूर वां रू ला सू उण पार,
आ रयी मदभर वसी नाद !
बाळ सूतें री जेम उसास,
वहे वायरियो घण उदमाद ।

महकती मेंदी तणी सुगध,
चादणी घवळ गिगन विस्तार ।
नीसरें नीवा सू चुपचाप,
हुतो चापळियो सुर सुकुमार ।

दूध सी सेज ऊपरें हुलस,
सुवाणें टावरियो भरणजाण ।
गवर ज्यू मायड छाती चेप,
कोड सू देती हाचळ जाण ।
कान मे कह छानें सी बात ।

वेसडा सू घ घूम घण नेह—
उघाडी भरी फूटरी देह,
पगलिया हाथ फेर सुकुमार,
कदे थापलती करती प्यार—

दे रही मायड हाचळ बाळ,
दिये मे भरियो हेत हलास ।

करती वाल्हा री वरसात,
उमडती अतस नेह उजास ।

फकती चादडलै दिस वाळ,
फूटरा नैना-नैना हाथ ।
किलक मायड रै गाला कदे,
देवती थाप इळक रै साथ ।
वाथ मे भर लेती माँ गात ।

पड्यो पोलै मुखडै थण लिया,
वाळ रा टिक्या चाद पर नैण ।
देख चादी-सो चादी गोळ,
टिंगटिंगी लागी रूपल रैण ।

भूख कद हुती ? फगत मनडी—
विलमावण हाचळ ही आधार ।
जीभडी कवळी थण री सीर,
फिरती छिन छिन दूधा धार ।

चादणी हदी कवळी भार,
सहै किम पलका घण सुकुमार ?
बन्द हुय दग-कळिया नीदाळ,
वाळ री खुली रयो मुख-वार ।
वहती हवा धणी विलमात ।

हुवा है नीदडली मे लीन,
सागगी भव दोनां री घांख ।
फूल ऊपर रस-आही जांण,
निचोती थमती फुदडी पास ।

वाळ जीभडली थण सूं परम,
सरस सुख-भर रोमांचक प्यार ।
सुहाणै सपनां रै संसार,
यकी मायड नै लेग्यां सार ।

उड गया भरे अवोल उडांण,
सपन-धींयाही-वन छविमाण ।
फुदडियां ज्यूं सपनीली जांण,
तलासण सोन्न भांण विहांण ।

भरै नभ सूं इमरत इखियात ।
रसीली तिली चांदणी रात ॥

दूर काळें वादळा मे

दूर—काळें वादळा मे डोलती चिडिया,
म्हनें ई साथ लेती जा ।
हेर, सावण रै पवन मे वोलती चिडिया,
म्हनें ई साथ लेती जा ।

चादणी हो या अंधारी,
जेठ मधु रत या सरद है ।
इण धरा जळवायु मे,
धिर जळण है, धिर दरद है ।
हाय, बळतै प्राण मे रस घोळती चिडिया,
म्हनें ई साथ लेती जा ।
दूर—काळें वादळा मे

वधणा री इणी धरती,
गीत बन्दो जाण म्हारा ।
सास ऊपर है सिलाडी,
हाय तडकें प्राण म्हारा ।
खुलें घाभें खुली पाखा, खोलती चिडिया,
म्हनें ई साथ लेतो जा ।
दूर—वाळें वादळा मे

वठ म्हारी सूख्म्यी, मत—
भर भला सगीत भोळी ।
पीठ पारावार म अत्र
वण मती यू साव बोळी ।

घणी, गैधू बी घटा मे, बोलती चिडिया—
हाय, बळतँ प्राण मे रस घोळती चिडिया—
खुले आभं, खुली पाखा, खोलती चिडिया—
म्हनं ई साथ लेती जा ।
पवन मे साथ लेती जा ।
दूर—काळें वादळा मे

म्हें बनवासी होती

रगां निरोगी में वसंत रै सोनल पौ-सो राती ।
बरसाती भरणै ज्यूं म्हारो लाल रगत लहराती ।
वज्रसार फौलादी चौड़ी द्याती लियां अकेली ।
मांसपेसियां नै चमकाती चलती म्है अलवेली ।
तूफांनी नदियां नै करती पार, लगाय'र गोती ।
म्हें बनवासी होती ॥

जोवण होती इसी, अजे लग किणी सुण्यी नीं दीठी ।
म्हारो होती राज जठा तक, खितिज रेख रो वीठी ।
रन रोही भरती पावण्डा, सीस उखणियां बोझी ।
वळे वजाती भरणां तट रै निकट बैठ अलगोजी ।
न्हांख गूण चट्टाणां माथै, निघडक हुय नै सोती ।
म्है बनवासी होती ॥

म्हें अब्रूभ रहती, मन में परमेसर सूं भय खाती ।
भरणा, भाखर, रुंख, चांद, सूरज नै सीस नवाती ।
म्हें अनाद संगीत लोक री, सुणती घीर पवन सूं ।
गह लेती उजियास, सूर चंदे री धवळ किरण सूं ।
जोत-विणासक ग्रंथ-भार, निज पीठ परे नीं डोती ।
म्हें बनवासी होती ॥

डावरनेणी जठे रसीली कोरां नै फेलायां ।
ऋजे जोनी वाट, अरुण पुसपां सूं अलक सजायां ।

आभं नै दरियाव सरीखा, प्रघळ खुला मोटा मन ।
 समदर छोळा ज्यू वळ खाता, उमडाता आलिगन ।
 महा जागरण होती म्हारी, जागतडो जग सोती ।
 म्हें वनवासी होती ॥

एकं वळ डूगर डीगोडा, उठी मोत री खाई ।
 उण पगडाडी वहती, धण रं सग दिया गळवाही ।
 भीफर पटा विखेर करत हाकल वाणावळि डाची ।
 जवडा भोड लाल आरया सू, सत्रु चवाती काची ।
 जीवण री सगळी रस पीती, धरती समभ कठोती ।
 म्हें वनवासी होती ॥

कुसुम कीट ज्यू हाय । सम्यता, चरगी कर पोखाळी ।
 मनडे जाळी मू डं ताळी, पडचौ हसण पर पाळी ।
 म्हें उजास री अमर पुत्र, रे मुक्ति लोक री प्राणी ।
 पातरग्यौ आजाद उडाणा, इमट रसीलो वाणी ।
 जीमण हित वणग्यौ सोवन पिंजडं री सूवटियी ती ।
 म्हें वनवासी होती ॥

हाल हिया ! इण निठुर जगत सू, दूर कठैई थोड़ी ताळ ।

उण दिस चालां, जठी मुक्ति, कदमां कांनी भुकती आवै ।

खुली हवा में हरियल खेतो, कोसां ताई लहरावै ।

सघन रुंखड़ां में बंठी, कोयलड़ी गीत भला गावै ।

आभं में उडता पंखेरू, दिल आजादी दरसावै ।

नदिया जठे हबोळा खाती, सोसनिया नभ तळें उताळ ।

हाल हिया ! इण निठुर जगत सू, दूर कठैई थोड़ी ताळ ॥

जठे डार ऊभा हिरणां रा, खुली चौकड़ी भरता व्हे ।

खिलखिल करता भीठे जळ रा, निरमळ भरणा भरता व्हे ।

सोनल ऊया नवल बनी, आथमतौ सूरज सिंदूरी—

कुंजां रे हरियल आंगणिये, आ चुपचाप उतरता व्हे ।

चांदइलै री किरणां राचे, लहरां पर चित्रांम रसाळ ।

हाल हिया ! इण निठुर जगत सू, दूर कठैई थोड़ी ताळ ॥

जळ थळ नभ मे जठे हेत री, मीठी बंसी वजती व्हे ।

मनइं री मदभरी कल्पना, नित ही मुक्त विचरती व्हे ।

जठे हिये री प्रीत खुली, अर हिवइं हंदो वरण खुली—

जीवण धारा निरमळ नील, गहन गंगा ज्यूं बहती व्हे ।

हेताळू मन लाज छोड, भर वाथां गळें मिळ भुरजाळ ।

हाल हिया ! इण निठुर जगत सू, दूर कठैई थोड़ी ताळ ॥

अरे हिया ! आ च्यार दिनां री, छोटो-सो तो जीवण हे ।

आतम री आणंद आंणं, जीवण री संच्यो घन हे ।

नी चाहीजे राजस अर इषकार, विभव ताकत म्हूंजे—

अठे पागलां री बस्ती मे, जीणां ही पागलपण हे ।

रन रोही मे किणी डाळ पर, फूला फळा छोड पपाळ ।
हाल हिया ! इण निठुर जगत सू , दूर कठई थोडी ताळ ॥

अठ दोम पल सारु म्हे, नी अधरा सू मुसकाय सका ।
खुलं कठसू मदभरिया, गीतडला म्हे नी गाय सका ।
अी जग नी वा ठोड जठं, म्हे प्यार हियं री पाय सका ।
अठं नही ओळख हिवडे री, हीरा नै परखाय सका ।
कुदरत ती है हरी-भरी पण, जीवण वळ भळ नै बवाळ ।
हाल हिया ! इण निठुर जगत सू , दूर कठई थोडी ताळ ॥

मोती-सो मन अठे भुळस नै, हाय भसम हो जावै रे ।
आतम री उजियास अठं ती, निरफळ ही खो जावै रे ।
अतस आस तणी चादडलो, अठं हाथ नी आवै रे ।
भोळी मिनख रोवती, नैने टावर ज्यू सो जावै रे ।
करी पयारणी जठे छळं नी, हिवडे नै हिवडी रुगटाळ ।
हाल हिया ! इण निठुर जगत सू , दूर कठई थोडी ताळ ॥

अरे हिया ! रहस्या उण ठोडा, जठं अमर घन पावाला ।
भेंवरा ज्यू गुजार करता, भूम भूम मडरावाला ।
जीवण हदो मद मिळसी, जे काटा मे बिंध जावाला ।
करणो करता जीवण साभू कमळ माही मुद जावाला ।
मुक्ति विहाण नीसरे उडस्यां, तृपत भेंवर ज्यू वण मतवाळ ।
हाल हिया ! इण निठुर जगत सू , दूर कठई थोडी ताळ ॥

किसा फूटरा लागै है, ऐ माटी रा घर ।

घोळै, रजमी सू सोहै, भीता भुरजाळो ।

सूवटिया मँडिया, गावेडू कळा निराळी ।

नीप्यं चूप्यं घणं फूटरै-सै आगण मे—

नीवा री रिळमिळ छीया लागै रूपाळी ॥

नदी किनारं सरसू रा खेता सू पुळती ।

वन-तुळछा री रसभोनी सोरम रिळमिळती ।

वाडी रा विध विध पीघा नै घण लहराती—

मस्त हवा कामण रा वेस हिलाती ढळती ॥

सूख रया है छाणा, मूनी खडा रुखडा ।

पासं वन-पीघा रा घण खिल रया फूलडा ।

ऊंची पूछ उठाय़ा दौड्या जावं देखीं—

रीछी करतोडा गडवा रा सुघड टोगडा ॥

लहराता वे चौडा-चौडा पत्ता वाळा ।

केळा रा रुखडा घणा ऊभा रूपाळा ।

वारी गहरी छाया मे गंदा गदरोज्या—

निज सुख सू फूल्या न समावं वे मतवाळा ॥

चमकीली लीली नभ तणियो सोहै सुपरौ ।

सेत चिणा री घण रूपाळी हरियो-भरियो ।

पवन भूलतं बावळियै री छीया जाणै—

जाळ मसमली पीघा ऊपर जाय पतरियो ॥

अठै सजाडी घणी सावळी आ अमराई ।
 जिकण माय सू वळ खाती पगडाडी आई ।
 तावड छीया रा कितरा चित्राम वण्णा है—
 फँली घूप सरद री चदणिया सुखदाई ॥

जिण रत मिमभर सू होती डाळा गजराई ।
 मुधरी सोरम री चलती हळकी पुरवाई ।
 हेताळू हिंवडा उण पुळ आतुर हुय जाता—
 नैणा मे सपना सजोती जद तरुणाई ॥

इणमे ऊपा जुग-जुग अम्वर डोली व्हेला ।
 कोयल डाळा मे लुक छिप नं बोली व्हेला ।
 वसी री धुन साथे ही चादडलं अपणी—
 चादी री कितरी निविया ला खोली व्हेला ॥

डाबर नैणी रं रूपाळं उण उणियारै ।
 हिचकी हेठै मड्यौ गोदणौ छिन्न सिणमारै ।
 मतवाळी घण रा उळइयोडा भँवर वेसडा—
 गाला री तिल निरख हरख नै नर थुथकारै ॥

सूरज तीजै पौ'र वणै की सीतळ ठीमर ।
 मदभर शाति निराट, लखावै गावा मनहर ।
 कदळी नीवा री छाया कितरी ममता सू—
 काची सी भीतइल्या नै ल वाथा मे भर ॥

सीसम केळू वास, रूख ऐ पीपळ कटहळ ।
 पखेरू दळ रा नित रहता जो रगस्थळ ।
 पौ फाटै जद वण जावै ऐ संग सुनहला—

रूख अबोल खजूरा रा जिण कानी ऊतर ।
 ढळती कूकू -भाण खितिज रै हरियै तट पर ।
 रातड उतरी गेहू रै खेता रूपाळी—
 भाड-वाठका पखेरू बोलै मस्ती भर ॥

सीसम रूखा रै पाना सू भीणी छण-छण ।
 ढळती व्हेला सरस चादणी आछै आगण ।
 रेत रम्योडें टावर नै ले माँ ग्वाडी मे—
 वाल्हा दे गाती व्हेला मुख निरख सुहागण ॥

दीवटियै नै मेल वारणं माथै लछमण ।
 नित दादी नै बैठ सुणावै छै रामायण ।
 कदेक ध्यान फटती व्हेला जद वाखळ मे—
 गाया रै गळ टोकरिया रो बजती टुण-टुण ॥

कितरी करुणा अठै, वळे है कितरी ममता ।
 इण सारू ही अठै अविद्या अर निरधनता ?
 गाव सुरग रा पेख, हाड पजर घर ऊपर—
 तासी जीवण-रगत न जाणै कुण सुख समता ?

जुग जुग सू शोपित गावा रा ऐ नारी नर ।
 अधनगा भूखा अबूक, लैणै सू जरजर ।
 ऐ जीवण सारू सावरियै ऊपर निरभर—
 नीचे ज्यारै धरती, ऊपर सूनी अम्बर ॥

गावेडू गोरी

कठई गावेडू भायका मे
 खेता सू नीसरती आवं है गोरडी
 घाट घाट वहती थकी,
 घरा दिस बळण करे प्रीतम मन मोरडी !
 डील री रग चीकणी भोर्नवरणी दीठी—
 जीवण—खटमीठी ।

रास बध्यो, पास भारी उखण्यो कामेतण,
 हाथ मे दातरी, तीखी धार तिण ।
 दोनू हाथा भारी थाम्या जावं ढाणी,
 रूप री धूप । हाला डूलो नी कियो तो निखद जिनगाणी ।
 घाघरं रं घेर मे पळवती पीडिया अर हाथा रा गठीला गट्टा,
 सातरा, राताचूट्ट, दीसता सुरग डील रा रग-पट्टा ।

कटारी-सी, प्याली सी हिरणी जिसी आख्या,
 रूप जवानी री पूरी खुलियोडो पाख्या ।

वाल, गाल, भाल सू टपकतो पसीनो,
 सोहै ज्यू जडियो नगीनी ।

चादणी, धूप, छाह, वायरं मे पकिये खेत ज्यू,
 बिडिया चहकती भडबोरडी ज्यू खुली है इणारी रूप,
 सोसनिया आभं रं नीचे ज्यू सोयाळी री धूप ।

किणारी आकात, सफं कोई खोटी निजर सू भाळ,
 उद्म री देवता । धर्धं लागी है परगाळ ।

घरटी फेरी, गाय भंस मेळी, रोटिया पोई पकाई
 गीगलं नै मेल्यो है पौसाळ ।

रूप जवानी री आ सिखराळी डाळो पकी,
 करडी मंनत सू कद थकी ?

अधिकार है इणारी

बधीजणी भरतार री फडकती भुजावा मे, लाजाळू दीठ,
 इनाम मे पावसी

बालम रं अतस री अमोलक हेज, गाढी अर गरीठ ।

कामेतण

कामेतण जळ भरवा आई गगा तट पर ।
 साव एकली तट सूनी पण अळगौ नी घर ।
 घडौ सीस माटी रौ सुन्दर,
 लाल ओढणी देह सावळी पुण्ट पयोघर ।
 उभराणी पावडा भरती अघर अघर घर ।
 तट सू थोडी दूर सामनें—
 छायादार सघन कु जा मे है वनपुरियो गाव नैडकौ
 मल्लाहा री छोटी बस्ती, शात सुखी रैवै है धीवर—
 कच्चा ज्यारा माटी रा घर ।
 उठै आव रा रू ख घणेरा, फूल्या-फूल्या सावळ-सावळ—
 नीव, सफेदा, बडला, कटहळ,
 अमलतास, जामन अर पीपळ ।
 ज्यामे ऊचा ऊभा डीगा ताड खिजूरा रा गरवीना—
 रू ख जिका छिव रूपाळी ।
 पूगी दूर उठा सू पाळी,
 अरहर रै खेता री पगडाडी मतवाळी ।

शात सीसनी आभे मे फेल्योडा धुण्या रुई सा ऊजळ—
 कठै उठै भीणा सा वादळ—दूध-फीण मा धवळ सुकोमळ ।
 चिडिया चहक्ती उडती ही फुरफुर-फुरफुर,
 नभ-मडळ मे, तर सू तरवर ।
 घणी सुहाणी सरद घूप म,
 नवी सरव दरमाव लागती—
 वाळी राजकुमारी री नौदहनी
 सुखभर प्रीत-नपन जू ।

गावेडू गोरी

कठई गावेडू भायका मे
 खेता सू नोसरती आवं है गोरडी
 बाट बाट वहती थकी,
 घरा दिस बळण करे प्रीतम मन मोरडी ।
 डील रो रग चीकणी भोनैवरणी दीठी—
 जीवण—खटमीठी ।
 रास बध्यो, घास भारो उखण्यो कामेतरण,
 हाथ मे दातरो, तीखी घार तिए ।
 दोनू हाथा भारो थाम्या जावं डाणी,
 रूप रो धूप । हाला डूली नी कियो तो निखद जिनगाणी ।
 घाघरे रे घेर मे पळकती पीडिया अर हाथा रा गठीला गट्टा,
 सातरा, राताचूट्ट, दीसता सुरग डील रा रग-पट्टा ।
 कटारी सी, प्याली सी हिरणी जिसी आस्या,
 रूप जवानी रो पूरी खुलियोडो पाख्या ।
 बाल, गाल, भाल सू टपकती पसीनो,
 सोहै ज्यू जडियो नगीनो ।
 चादणी, धूप, छाह, चायरं मे पकिये खेत ज्यू,
 चिडिया चहकती भडबोरडी ज्यू खुली है इरारी रूप,
 सोसनिया आभं रे नीचे ज्यू सीयाळं रो धूप ।
 किणारी श्रीकात, सकं कोई खोटी निजर सू भाळ,
 उट्टम रो देवता । घघं लागी है परगाळ ।
 घरटी फेरी, गाय भंस मेळी, रोटिया पोई पकाई
 गोगलं नै मेल्यो है पोसाळ ।
 रूप जवानी रो आ सिखराळी डाळी पकी,
 करडी मैनत सू कद थकी ?
 अधिकार है इरारी
 बघीजणी भरतार रो फडकती भुजावा मे, लाजाळू दीठ,
 इनाम मे पावसी
 बालम रे अतस रो अमोलक हेज, गाढो अर गरीठ ।

कामेतरण

कामेतरण जळ भरवा आई गगा तट पर ।
 साव एकली तट सूनी पण अळगो नी घर ।
 घडो सीस माटी रो सुन्दर,
 लाल ओढणी देह सावळी पुष्ट पयोघर ।
 उभराणी पावडा भरती अघर अघर घर ।
 तट सू थोडी दूर सांमने—

छायादार सघन कु जा मे हे वनपुरियो गाव नंडको
 मल्लाहा री छोटी वस्ती, शात सुखी रैवे हे घीवर—
 कच्चा ज्यांरा माटी रा घर ।
 उठे आव रा रू ख घणेरा, फून्या-फूल्या सावळ-सावळ—
 नीव, सफेदा, बडला, कटहळ,
 अमसतास, जामन अर पीपळ ।
 ज्यामे ऊचा ऊभा डीगा ताड खिजूरा रा गरवीला—
 रू ख जिका छिव रूपाळी ।
 पूगी दूर उठा सू पाळी,
 अरहर रे खेता री पगडाडी मतवाळी ।

शात सोसनी आभे मे फैल्योडा घुण्या रुई सा ऊजळ—
 वठे कठे भीणा सा वादळ—दूध-फीण ना घवळ सुकोमळ ।
 विडिया चहकती उडती ही फुरफुर-फुरफुर,
 नभ-मडळ मे, तर सू तरवर ।
 घणी मुहाणी सरद धूप मे,
 नवी सरब दरसाव लागती—
 वाळी राजकुमारी री नीदडली
 सुखभर प्रीत-नापन ज्यू ।

किनरी विराट है आ गगा—रामनगर ताई पसरधी जळ—
नीली, चिकणी, सीतळ, निरमळ, उरमिळ, ऊजळ,
तावड री तिडकी मे चिळकें भळमळ भळमळ ।

भोळा टावरिया री तुतळा अळप विचारा सिरखी कलबल
लहरा उठती पडती पल-पल ।

हीरै री आभा ज्यू वारी छीया करती रळमळ रळमळ
पाडै है प्रतविंव पळापळ,

तट तरवर रा कठण तरणा पर ।

तारी री वरसात होवती, लगती सूरज री किरणा सू,
बीच धार मे, की दूरी पर ।

लौ, ढळाण सू उतर रही छै

तिल रा कँवळा सोसनिया पुसवा ज्यू सोहै

पीळा फूला सू इतराया सरसू रा सावळ पीधा रै—

विचै बणी पगडाडी सू व्है ।

चढा ओढणी, जळ मे उतरी गोडा ताई

मेल घडौ जळ माथे दो पल,

जळ हिलरायौ छलछल छलछल,

भरियां घडौ उखणिया भारी,

भूम उठी जोवन मे सारी,

काढ चिन्यौ-सो घू घट,

सिर ऊपर घट,

पगडाडी पकडी निज सँकडी,

जाती भटपट, लहराती लट, फहराती पट ।

मदछक्क गति सू और पवन सू —

पडे ओढणी मे जद सळवट ।

दाय आयगी

मानो-मत-मानो—

म्हनें तो आ जमी दाय आयगी !

ठीक है कं अठे जुड है, रगत है, तोप है, तीर है
लू है, लपट है, नवसे री लकीर है,
पण अठे इज तो एक-दूजे सू मिळण री हेताळू चाह है,
भाड-बोरडिया मे ई हरियाळी राह है ।

मेनतगारी सावळी देह माथे मोती-सो पसीनी है—

विश्वास ज्यू फेल्योडे सोसनी आभं मे

चाद सूरज री नगीनी है ।

चादणी है, कीरप है, मानखे रा जजवात है—

अहा, अठा री काई वात है ?

सोनं री सुमेर, अपद्धरा, कळपवृच्छ नं कामधेन—

इणा रं सारु घणी ई सुणियां है,

बुणणहार पण किस्सी तो

चोखी इज बुणियां है ।

पण काई कैऊ—आज तो आ घरती ज हकीगत है

च्यार दिना री सही, पण आ जिदगी ज हकीगत है ।

चाहे नी केवो, आ जमी, आ जिदगी, दाय म्हनें आयगी ।

लखावे है—ज्यू ,

लेर रं छोटै-से गीत गाईजतै छवीले छिन मे

आभं री सगळी दोलत—

घरे बैठे ई खनें आयगी !

विराट-वंदना

नैण री जोत

नैण री जोत बुझ जावै, चरण री चाल रक जावै—
हिये मे पण अरे घनश्याम, थारी प्रीत लहरावै ।

हवा रै दीप ज्यू सगळा, छूट अळगा हुवै साथी—
पार लग जावसू जे, आगळी तो हाथ भिन जावै ।

भला ई अस्त हो जावै भाण अर चद्रमा तारा—
म्हनें ती राज रै वस चरण नख री जोत बगमावै ।

सुरगा भाव-पुसपा सू फळा सू पानडा सू लद—
आपरै चरण लग म्हारै हिये रो डाळ भुक जावै ।

नैण री जोत ॥

निजर मो पर पडी धारी

निजर मो पर पडी धारी, उजाळी हुय गयीं जग मे ।

अधारी मिट गयीं मन री, भरची आणद रग-रग मे ।

निजर मो पर पडी

तडातड तूट नें वधण, सैग लाग्या पडण हेठा,

चहक्ती प्राण री पछी, उड्यी आकास रें मग में ।

निजर मो पर पडी

हुई आणद री विरखा, हिये री समेंद भर उमड्यो—

जिकण मे बह गया सगळा जगत रा जाळ पल भर में ।

निजर मो पर पडी

भाखरा तणा भरणा ज्यू, मधुर मुर फूट बह निकळया—

जिकण री सरस बू दा, उछळती सी आ रही रग में ।

निजर मो पर पडी

रेण दुख दरद री बीती, हुवां हरख री जाभरकीं

तुहाळी प्रीत री वसी, सुणीजें आज तीं जग मे ।

निजर मो पर पडी

जनम-जनम मे म्हनै

जनम-जनम मे म्हनै आपरै, चरण-बमल री प्रीत मिले ।
बमलनयण ! म्हारै अतस मे राज सुरगी रूप खिले !

जनम-जनम मे

बार-बार ले मिनख जमारो, पाछी इण जग मे आऊँ,
माथ रही, फिर जग मे चाहे हार मिले या जीत मिले ।

जनम-जनम मे

नासवान जीवण भी है मजूर म्हनै धा मिलिया सू ,
भव री तिहकी बगै चादणी, जे धारी पट पीत मिले ।

जनम-जनम मे

वामधेन री, कळपवृच्छ री, रिद्धि-सिद्धि री चाह नही,
जनम-जनम वृ दावन वाली, रास सुरगी रीत मिले ।

जनम-जनम मे .

सीत तावडो, सुख-दुख रा ऐ जनम-मरण रा दु द रहे
थे सबळा रैवो भव-भव मे, चाहे सब विपरीत मिले ।

जनम-जनम मे

जप तप जोग असभव म्हारै, नी मुगती री चाह रही,
पा लेस्यू सगळो जे धारी बसी री सगीत मिले ।

जनम-जनम मे .

कोई मार्ग धी, मद, मिसरी, कोई मार्ग दही मही ,
जीवण-फळ मे म्हनै राज री ऐंठ्योडो नवनीत मिले ।
जनम-जनम मे म्हनै आपरै, चरण बमल री प्रीत मिले ॥

किण काम रा घन-धाम ऐ

किण काम रा घन धाम ऐ, समान सब आराम रा—
जे हो सका नी म्हे कदेई, इण जनम मे राम रा ।

हुय राम चरणा सू विमुख, रस भोग सगळा कर लिया—
ती हुवो फाई ! रंग्या, वण फगत गिडक गाम रा ।

श्री राम हदै चरण कमळा सीस जे भुक्वियो नही,
ती बोझ डोरण काज म्हे ती बळध आठू जाम रा ।

श्री राम चरणा, वेलडी ज्यू देह भुक पाई नही,
किण काम फेरु आवसी ऐ अग बोदी चाम रा ।

सम्राट वण पायो किसू , जे जीतग्या ससार नै,
जे हो सबया नी राम रा, मजदूर म्हे विन दाम रा ।

धरम री मंगळ जोत जळें

जोत सू भर जावै ससार ।
मिटें जीवण री हाहाकार ।
एक ही तूट्योडें मन हूत,
पीड री आह जदे निवळै ।

धरम री मंगळ जोत जळें ।

प्रीत री भरणी घणी सुहात
ज्ञान री जागै नवी प्रभात,
खिलै नव जीवण हृदी वमळ,
रैण अधारी बीत टळ ।

धरम री मंगळ जोत जळें ।

पुराणा पत्ता सब भड जाय
मानवी हरियाळी लहराय
मिळै सगळा ही मानव बधु,
नेह सू लागै आज गळें ।

धरम री मंगळ जोत जळें ।

जुगा सू सहियो कष्ट तमाम
मानखा कर थोडी विश्राम
सावळी जमुना हृदै तीर,
प्रीत रै सघण कदम्ब तळें ।

धरम री मंगळ जोत जळें ।

हार नै मधुर बणाई जीत
गूज होठा नव-जीवण गीत
प्रीत री सरस निभाता रीत,

धरम री मंगळ जोत जळें

जोत सू भर जावें ससार ।

मिटं जीवण री हाहाकार ।

एक ही वट्याडे मन हूत,

पीड री आह जदे निवळें ।

धरम री मंगळ जोत जळें ।

प्रीत रा भरणी घणी सुहात,

ज्ञान री जागै नवी प्रभात,

खिलें नव जीवण हदी कमळ,

रंण अधारी वीत टळें ।

धरम री मंगळ जोत जळें ।

पुराणा पत्ता सव भड जाय

मानवी हरियाळी लहराय

मिळें सगळा ही मानव वधु,

नेह सू लागे आज गळें ।

धरम री मंगळ जोत जळें ।

जुगा सू सहियो कष्ट तमाम

मानखा कर थोडी विथाम

सावळी जमुना हदै तीर,

प्रीत रें सघण कदम्ब तळें ।

धरम री मंगळ जोत जळें ।

हार नै मधुर बणाई जीत

गूज होठा नव-जीवण गीत

प्रीत री सरस निभाता रीत,

